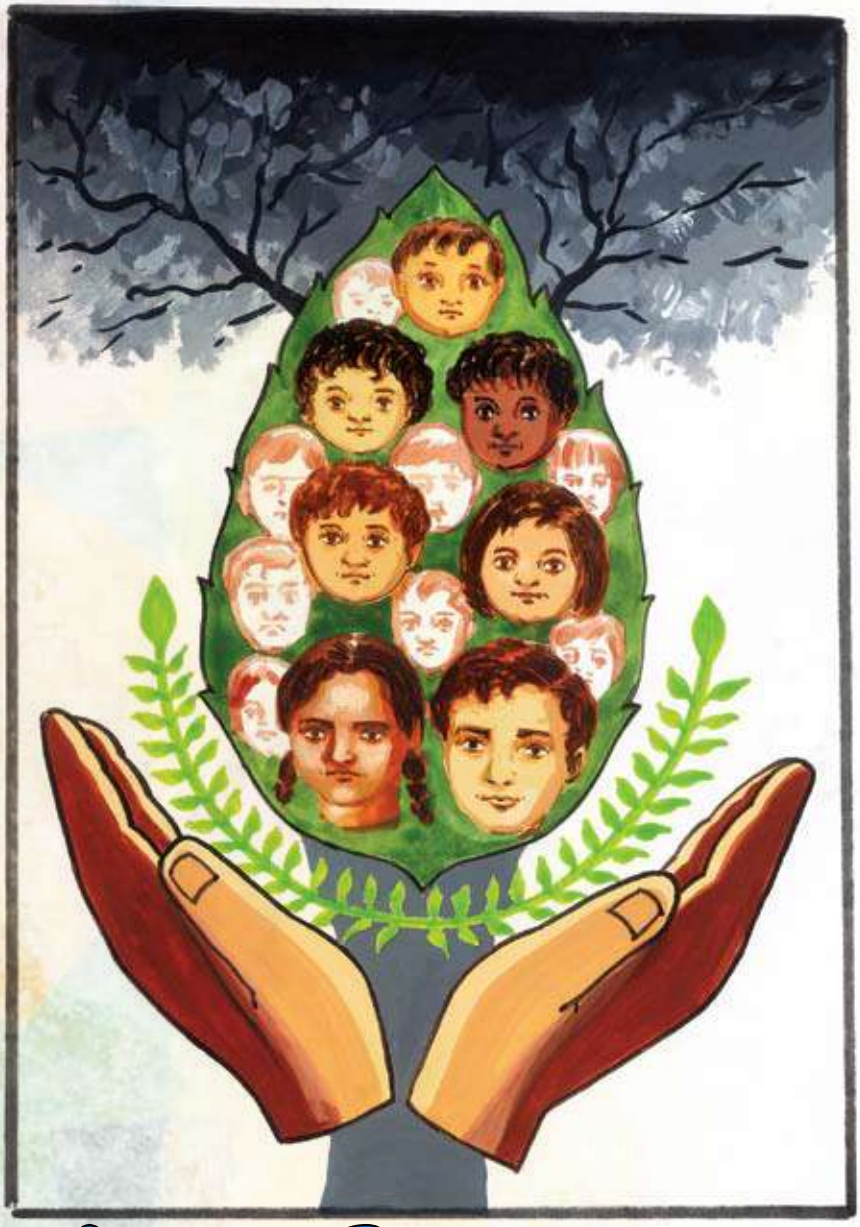

बच्चों की सुरक्षा

पंचायतों के लिए हैंडबुक

पंचायत के प्रतिनिधि बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति होते हैं!

बच्चे बहुत महत्वपूर्ण व्यक्ति होते हैं!

प्रिय पंचायत सदस्यो

ग्राम पंचायत का नेता होने के नाते आप अपने गांव के लोगों के सबसे नजदीक हैं। इस बहाने आप गांव के बच्चों के भी प्रतिनिधि हैं, भले ही वे अभी वोट न देते हों। लेकिन कल वे भी बड़े होंगे, वे भी वोट डालेंगे। लिहाजा, तब वे हम लोगों से, आज के बालिगों से इस बात का जवाब मांगेंगे कि हमने उनका पालन-पोषण अच्छी तरह क्यों नहीं किया। इसलिए, निर्वाचित प्रतिनिधि के नाते आपको इस बात का खयाल रखना है कि बच्चों के अधिकारों पर किसी तरह की आंच न आए।

हम सभी इस बात को अच्छी तरह जानते हैं कि बच्चों के साथ दुराचार, हिंसा और शोषण हर समाज में होता है। अगर आप अपने इर्द-गिर्द नजर डालें तो इस बात को खुद भी महसूस कर सकते हैं। पढ़ाई-लिखाई के मौकों से महरूम बहुत सारे बच्चे मजूदरी पर जा रहे हैं। उनमें से कई बंधुआ मजदूर हैं। न जाने कितने बच्चे अपने माता-पिता या शिक्षकों के हाथों मारपीट के शिकार होते हैं। ज्यादातर के साथ स्कूल में या दूसरे स्थानों पर जाति-धर्म के आधार पर भेदभाव होता है। कई जगह लड़कियों का जन्म शुभ नहीं माना जाता। कई लड़कियों को पैदा होते ही मार दिया जाता है या पैदा ही नहीं होने दिया जाता है। हमारे समाज में आज भी लड़कियों को केवल लड़की होने के कारण परिवार और समाज में दूसरे दर्जे की जिंदगी जीनी पड़ती है।

अगर आपको कोई ऐसा बच्चा दिखायी देता है जिसके साथ दुराचार या शोषण हो रहा है तो अपने समुदाय और लोगों का मुखिया होने के नाते आप क्या करेंगे?

क्या आप ....

- इसे तकदीर का खेल मानकर भूल जाएंगे?
- ये दलील देंगे कि जब आज के सभी वयस्क बचपन में इसी तरह के हालात से गुजरे हैं तो इसमें गलत क्या है?
- यह दलील देंगे कि ये तो रीति और चलन की बात है जिसके बारे में कुछ नहीं किया जा सकता?
- गरीबी को जिम्मेदार ठहराएंगे?
- भ्रष्टाचार को जिम्मेदार ठहराएंगे?
- बच्चे के परिवार वालों की जिम्मेदारी मानकर आप चुपचाप निकल जाएंगे?
- आप यह जानने की कोशिश करेंगे कि बच्चे को वाकई हिफाजत की जरूरत है या नहीं?
- आप तब तक इंतजार करेंगे जब तक आपको पूरे सुबूत नहीं मिल जाते?

या फिर आप...

- इस बात का खयाल रखेंगे कि बच्चे को एक सुरक्षित वातावरण में रखा जाए
- बच्चे से बात करेंगे और उसकी राय/कहानी के बारे में जानेंगे
- उसके परिवार वालों से बात करके उन्हें यह समझाएंगे कि हर बच्चे को सुरक्षित रहने का अधिकार है इसलिए मां-बाप को अपने बच्चों का संजीदगी से खयाल रखना चाहिए?
- जरूरत होगी तो बच्चे और उसके परिवार की मदद करेंगे?
- यह पता लगाएंगे कि बच्चे को किन चीजों से खतरा पैदा हो रहा है?
- जो लोग बच्चे के साथ बेरहमी का बर्ताव करते हैं या जो बच्चे के लिए खतरनाक हैं, उन लोगों के खिलाफ कार्रवाई करेंगे?
- अगर कानूनी सुरक्षा और समाधान की जरूरत है तो आप पुलिस/चाइल्ड लाइन को इस घटना के बारे में बताएंगे?

आपका रवैया इस बात पर निर्भर करेगा कि आप अपनी क्या जिम्मेदारी मानते हैं। क्या आप खुद को सिर्फ एक नेता मानते हैं? या आप खुद को अपने समुदाय का मुखिया भी मानते हैं? कहने की जरूरत नहीं है कि समुदाय के मुखिया और पंच सामाजिक परिवर्तन में जबर्दस्त योगदान दे सकते हैं तथा औरों के लिए प्रेरणास्रोत बन सकते हैं।

पंचों का महत्व इसलिए होता है क्योंकि ...

- आपको अपने पद की वजह से कुछ अधिकार और जिम्मेदारियां मिली हैं। लिहाजा, आप सरकार की शासन व्यवस्था का हिस्सा हैं और सभी नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना आपकी जिम्मेदारी है।
- आप लोगों के नेता भी हैं और आदर्श भी। आपको खुद लोगों के सामने मिसाल पेश करनी होगी।
- निर्वाचित प्रतिनिधि के तौर पर अपने गांव या इलाके के बच्चों की देखभाल व हिफाजत की जिम्मेदारी आप पर भी आती है।
- आप सिर्फ नेता की बजाय एक ज्यादा बड़ी भूमिका निभा सकते हैं। आप समाज परिवर्तन का हिस्सा हो सकते हैं।

यह पुस्तिका आपकी जरूरतों और हालात को ध्यान में रखते हुए खास आपके लिए ही तैयार की गई है ताकि आप बच्चों की मदद कर सकें और उन्हें दुराचार व शोषण से बचा सकें। यहां हमने कानूनों का जिक्र तो किया है लेकिन इस बात का हमेशा खयाल रखें कि कानूनी सलाह के लिए आपको किसी वकील से ही मिलना पड़ेगा।

क्या आपकी पंचायत बच्चों की दोस्त है?

नहीं है तो आप उसे ऐसा बना सकते हैं!

बाल मित्र पंचायत ऐसी पंचायत होती है जो बच्चों की सुरक्षा करती है और उन्हें हिंसामुक्त व सुरक्षित वातावरण मुहैया कराती है। गांव के प्रतिनिधि के नाते आपको ऐसे हालात में आगे बढ़कर दखल देना चाहिए।

आपको इस बात के लिए जोर लगाना है कि गांव का बच्चा-बच्चा यही नारा लगाए- 'मेरी पंचायत मेरी दोस्त'।

'बच्चा' कौन है?

अंतर्राष्ट्रीय कानून के अनुसार 18 साल से कम उम्र के व्यक्ति को 'बच्चा' माना जाता है। इस परिभाषा को दुनिया भर में मंजूरी मिल चुकी है। यह परिभाषा संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कनवेंशन (यूएनसीआरसी) में पायी जाती है। यह कनवेंशन एक अंतर्राष्ट्रीय कानून है जिस पर ज्यादातर देश अपनी रजामंदी दे चुके हैं।

भारत में 18 साल से कम उम्र के व्यक्तियों को एक अलग कानूनी इकाई के रूप में देखा जाता है। यही वजह है कि हम 18 साल की उम्र से पहले न तो वोट डाल सकते हैं और न ही कोई कानूनी अनुबंध कर सकते हैं। बाल विवाह रोकथाम कानून, 2006 के तहत 18 साल से कम उम्र की लड़की और 21 साल से कम उम्र के लड़के की शादी गैरकानूनी बताई गई है। भारत के कई कानूनों में बच्चे की परिभाषा इससे अलग भी मानी गई है। ऐसे कानूनों में भी यूएनसीआरसी की परिभाषा का समावेश किया जाना चाहिए। 1992 में यूएनसीआरसी का अनुसमर्थन करने के बाद भारत सरकार ने अपने बाल न्याय कानूनों में बदलाव किया है ताकि 18 साल से कम उम्र के ऐसे हर बच्चे को सरकार की तरफ से देखभाल और सुरक्षा प्रदान की जा सके जिसे इस तरह की मदद की जरूरत है।

इसका मतलब यह है कि हमें अपनी ग्राम पंचायत के 18 साल से कम उम्र के सभी सदस्यों के साथ बच्चों सा बर्ताव करना चाहिए। वे सभी हमारी-आपकी मदद और देखरेख के हकदार हैं।

मुख्य बातें

- 18 साल से कम उम्र का कोई भी लड़का या लड़की बच्चा है।
- बचपन एक ऐसी प्रक्रिया है जिससे हर इंसान गुजरता है।
- बचपन में हर बच्चे के अनुभव अलग-अलग होते हैं।
- सभी बच्चों को दुराचार और शोषण से सुरक्षा मिलनी चाहिए।

बच्चों पर विशेष ध्यान क्यों दिया जाना चाहिए?

- किसी भी परिस्थिति में बड़ों के मुकाबले बच्चों के लिए ज्यादा खतरे होते हैं।
- लिहाजा, सरकार और समाज की सक्रियता और निष्क्रियता से उन पर सबसे ज्यादा असर पड़ता है।
- ज्यादातर समाजों में यही माना जाता है कि बच्चे अपने मां-बाप की संपत्ति हैं या, वे वयस्क बनने की प्रक्रिया में हैं इसलिए अभी समाज में योगदान देने के काबिल नहीं हुए हैं।
- बच्चों को वोट डालने का अधिकार नहीं होता। न ही वे कोई राजनीतिक प्रभाव रखते हैं। उनके पास आर्थिक ताकत भी नहीं होती। उनकी आवाज अकसर अनसुनी कर दी जाती है।
- शोषण और दुराचार का खतरा बच्चों पर खासतौर से ज्यादा होता है। बच्चों के अधिकार मानवाधिकार हैं!

बाल अधिकार क्या होते हैं?

18 साल से कम उम्र के सभी बच्चों को हमारे देश के कानूनों और हमारी सरकार द्वारा स्वीकृत अंतर्राष्ट्रीय कानूनों में दी गई सुविधाएं और अधिकार मिलने चाहिए।

भारतीय संविधान

भारतीय संविधान सभी बच्चों को कुछ खास अधिकार प्रदान करता है। ये अधिकार खासतौर से उनको ध्यान में रखकर ही बनाए गए हैं। इन अधिकारों में निम्नलिखित शामिल हैं:

- 6-14 साल की उम्र के सभी बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार है (धारा 21 ए)।
- 14 साल की उम्र तक सभी बच्चों को किसी भी खतरनाक रोजगार/काम से सुरक्षा का अधिकार है (धारा 24)।
- उन्हें दुराचार से बचने और गरीबी के कारण अपनी उम्र या ताकत से ज्यादा बड़े काम करने की मजबूरी से बचने का अधिकार है (धारा 39 ई)।
- बच्चों को सही ढंग से पालन-पोषण और आजादी व इज्जत के साथ बराबर अवसर व सुविधाएं पाने का अधिकार है। संविधान में बचपन और युवावस्था को शोषण तथा नैतिक व भौतिक लाचारी/बेसहारेपन से सुरक्षा का भी आश्वासन दिया गया है (धारा 39 एफ)।

इनके अलावा बच्चों को वे सारे अधिकार भी मिलते हैं जो भारत का नागरिक होने के नाते किसी भी बालिग औरत-मर्द को दिए गए हैं:

- समानता का अधिकार (धारा 14)।
- भेदभाव से सुरक्षा का अधिकार (धारा 15)।
- व्यक्तिगत स्वतंत्रता व कानूनी प्रक्रिया का अधिकार (धारा 21)।
- बंधुआ मजदूरी के लिए मजबूर न किए जाने और मानव व्यापार से सुरक्षा का अधिकार (धारा 23)।

- समाज के कमजोर तबकों को सामाजिक अन्याय और किसी भी तरह के शोषण से सुरक्षा का अधिकार (धारा 46)।

सरकार की जिम्मेदारी है कि वह:

- बच्चों व औरतों के लिए विशेष प्रावधान करे (धारा 15 (3))।
- अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा करे (धारा 29)।
- समाज के कमजोर तबकों के शैक्षणिक हितों को बढ़ावा दे (धारा 46)।
- लोगों के पोषण तथा जीवनस्तर में सुधार लाए तथा उनके स्वास्थ्य का खयाल रखे (धारा 47)।

सीआरसी के कुछ खास पहलू ये हैं:

- *यह कानून 18 साल की उम्र तक के लड़के और लड़कियों, दोनों पर बराबर लागू होता है। अगर 18 साल से कम उम्र में ही किसी की शादी हो चुकी है और उसके बच्चे भी हैं, तो भी इस कानून के तहत उसे बच्चा ही माना जाएगा।*
- *यह कनवेंशन "बाल हित", "निष्पक्षता" तथा "बच्चे की राय के सम्मान" के सिद्धांत पर आधारित है।*
- *इस कनवेंशन में परिवार को एक महत्वपूर्ण जगह दी गई है। इस कनवेंशन में एक ऐसा माहौल पैदा करने की जरूरत पर जोर दिया गया है जो बच्चे के सही विकास और बढ़त के लिए अच्छा हो।*
- *यह कनवेंशन सरकार को इस बात की जिम्मेदारी देती है कि वह बच्चों को हर तरह के भेदभाव से आजाद रखे और उन्हें बराबरी की हैसियत दिलाए।*
- *नागरिक, राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक क्षेत्र में यह कनवेंशन बच्चों के इन चार अधिकारों की ओर ध्यान आकर्षित कराती है:*
  - *जीने का अधिकार*
  - *सुरक्षा*
  - *विकास*
  - *सहभागिता।*

संविधान के अलावा भी कई ऐसे कानून हैं जो खासतौर से बच्चों को ध्यान में रखकर ही बनाए गए हैं। पंचायत का जिम्मेदार सदस्य होने के नाते यह जरूरी है कि आपको इन कानूनों और उनकी अहमियत का पता हो। इनके बारे में इस पुस्तिका के अलग-अलग हिस्सों में चर्चा की गई है। साथ ही ये भी बताया गया है कि कौन सा कानून किस तरह के मुद्दों के बारे में है।

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कनवेंशन

बच्चों के बारे में बनाए गए अंतर्राष्ट्रीय कानूनों में संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कनवेंशन सबसे महत्वपूर्ण कानून है। आम बोलचाल में इसे सीआरसी या यूएनसीआरसी कहा जाता है। भारतीय संविधान और हमारे कानूनों के साथ-साथ यह कानून भी बच्चों के अधिकारों को तय करता है।

संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कनवेंशन (सीआरसी) क्या है?

जो अधिकार हर उम्र, हर किस्म, हर नस्ल के लोगों को मिलते हैं उन्हें मानवाधिकार कहा जाता है। बच्चों को भी ये अधिकार मिलते हैं। लेकिन बच्चों को कुछ खास तरह के अधिकार भी दिए गए हैं। ये अधिकार उन्हें इसलिए मिले हैं क्योंकि बच्चों को हमेशा ज्यादा हिफाजत और देखरेख की जरूरत होती है। इन अधिकारों को बाल अधिकार या बच्चों के अधिकार कहा जाता है। इन्हें संयुक्त राष्ट्र बाल अधिकार कनवेंशन (सीआरसी) में लिखा गया है।

नोट : जैसे-जैसे बच्चों की उम्र बढ़ती है वे नई काबीलियत और परिपक्वता हासिल करते जाते हैं। 15-16 साल तक आते-आते वे काफी परिपक्व दिखने लगते हैं। लेकिन इसका मतलब ये नहीं है कि ऐसे बच्चों को हिफाजत की जरूरत नहीं रहती। हमारे देश में तो 18 साल से कम उम्र में ही न जाने कितने बच्चों के शादी-ब्याह हो जाते हैं या उन्हें नौकरी पर लगा दिया जाता है। अगर समुदाय ये मानता है कि ऐसे बच्चों को हिफाजत की जरूरत नहीं है तो यह गलत है। उन्हें भी उतनी ही सुरक्षा, अवसर और मदद मिलनी चाहिए जितनी और बच्चों को मिलती है ताकि बालिग जिंदगी की ओर वे भी आत्मविश्वास के साथ और सही ढंग से बढ़ सकें।

जीने के अधिकार में निम्नलिखित शामिल हैं:

- जीवन का अधिकार
- बेहतरीन स्वास्थ्य का अधिकार
- पोषण का अधिकार
- सही जीवन स्तर का अधिकार
- एक नाम और एक राष्ट्रीयता का अधिकार।

विकास के अधिकार में निम्नलिखित शामिल हैं:

- शिक्षा का अधिकार
- बचपन में देखभाल और सहायता का अधिकार
- सामाजिक सुरक्षा का अधिकार
- आमोद-प्रमोद, मनोरंजन और सांस्कृतिक गतिविधियों का अधिकार।

सुरक्षा के अधिकार में निम्नलिखित अधिकार आते हैं:

- शोषण से मुक्ति का अधिकार
- उत्पीड़न से मुक्ति का अधिकार
- अमानवीय या अपमानजनक बर्ताव से मुक्ति का अधिकार
- उपेक्षा से मुक्ति का अधिकार
- इमरजेंसी या अपंगता आदि खास हालात में विशेष सुरक्षा का अधिकार।

सहभागिता के अधिकार में निम्नलिखित शामिल हैं :

- बच्चे की सोच का सम्मान करना।
- उसे अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता देना।
- उसे सही सूचनाएं देना।
- वैचारिक और धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार।

ये सभी अधिकार एक दूसरे पर आश्रित हैं। उन्हें एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। इन अधिकारों को दो हिस्सों में बांट कर भी देखा जाता है:

- **फौरी अधिकार** (नागरिक एवं राजनीतिक अधिकार) ऐसे अधिकार होते हैं जिनको तुरंत अमल में लाना जरूरी होता है। इनमें भेदभाव, सज़ा, मुकदमे में निष्पक्ष सुनवाई, बच्चों के लिए अलग न्याय व्यवस्था का अधिकार, जीवन का अधिकार, राष्ट्रीयता का अधिकार और दोबारा परिवार के साथ रहने का अधिकार शामिल है।
- **प्रगतिशील अधिकार** (आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकार) जिनमें स्वास्थ्य और शिक्षा के अलावा ऐसे अधिकार भी शामिल हैं जो फौरी अधिकारों की श्रेणी में नहीं आते।

सुरक्षा संबंधी ज्यादातर अधिकार फौरी अधिकारों की श्रेणी में आते हैं। इन अधिकारों पर फौरन ध्यान दिया जाना चाहिए और फौरन कार्रवाई की जानी चाहिए।

उन्हें सीआरसी की धारा 4 में मान्यता दी गई है। इस धारा में कहा गया है कि:

"आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों के सिलसिले में सरकारों को अपने संसाधनों और जरूरत के हिसाब से तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग की समझ को ध्यान में रखते हुए ऐसे सभी आवश्यक उपाय करने होंगे।"

इस पुस्तिका में हम बच्चों के सुरक्षा अधिकार और इसके सिलसिले में पंचों की भूमिका पर चर्चा करेंगे।

सुरक्षा का अधिकार

पंच होने के नाते आप इस बात का खयाल रख सकते हैं कि आपके चुनाव क्षेत्र के सभी बच्चे सभी तरह के

- शोषण
- दुराचार
- अमानवीय या अपमानजनक बर्ताव, और
- उपेक्षा से पूरी तरह सुरक्षित हों।

सुरक्षा की जरूरत सभी बच्चों को होती है। फिर भी, अपनी सामाजिक, आर्थिक या भौगोलिक स्थिति के कारण कुछ बच्चों की हालत औरों से ज्यादा नाजुक होती है। लिहाजा, इस प्रकार के बच्चों पर हमें खासतौर से ध्यान देना चाहिए:

- बेघर बच्चे (फुटपाथ पर रहने वाले, विस्थापित/उजाड़े गए बच्चे, शरणार्थी इत्यादि)
- प्रवासी बच्चे
- सड़कों पर रहने वाले बच्चे
- अनाथ या छोड़ दिए गए बच्चे
- कामकाजी बच्चे
- वेश्याओं के बच्चे
- बाल वेश्याएं
- खरीदे-बेचे गए बच्चे
- हिंसक हालात में फंसे बच्चे
- प्राकृतिक आपदाओं से प्रभावित बच्चे
- एचआईवी/एड्स के शिकार बच्चे
- लाइलाज बीमारियों से पीड़ित बच्चे
- विकलांग बच्चे
- अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के बच्चे

इन सारी श्रेणियों में बच्चियाँ और भी ज्यादा खतरे में होती हैं।

बच्चों के दुराचार और शोषण के बारे में प्रचलित कुछ गलतफहमियां इस प्रकार हैं:

1. बच्चों का दुराचार या शोषण नहीं होता। हर समाज अपने बच्चों को प्यार करता है।

जी हां, हम अपने बच्चों को प्यार करते हैं लेकिन इसमें कुछ खामियां भी हैं। दुनिया भर में सबसे ज्यादा बाल मजदूर भारत में हैं। यौन शोषण के शिकार बच्चों की संख्या सबसे ज्यादा भारत में है। 0-6 साल की उम्र के बच्चों में लड़का-लड़की अनुपात सबसे खराब हमारे देश में है। इससे पता चलता है कि लड़कियों की जिंदगी अकसर दांव पर लगी रहती है। कई बार तो लड़की होने के कारण नवजात शिशु को ही गोद देने के नाम पर बेच दिया जाता है या मार डाला जाता है।

बच्चों के साथ होने वाले जिन अपराधों को पुलिस के पास दर्ज कराया जाता है उन्हें देखने पर रोंगटे खड़े हो जाते हैं! इन रिकॉर्डों के हिसाब से 2005 और 2006 के बीच बच्चों के साथ होने वाले अपराधों में 26.7 प्रतिशत का इजाफा हो चुका था। और ऐसे मामलों की तो कोई गिनती ही नहीं है जिनको कभी कहीं दर्ज नहीं किया जाता।

2. सबसे सुरक्षित जगह तो घर ही है।

बच्चे अपने घरों में जिस हद तक दुराचार झेलते हैं उससे यह मान्यता गलत साबित हो जाती है। बच्चों को उनके मां-बाप की निजी संपत्ति माना जाता है जिनका वे किसी भी तरह उपयोग (या दुरुपयोग) कर सकते हैं।

हर दूसरे दिन यह खबर आ जाती है कि फलां जगह बाप ने पैसे के लिए अपनी बेटी अपने दोस्तों या अजनबियों को बेच दी। यौन शोषण से संबंधित अध्ययनों को देखने पर पता चलता है कि बच्चों के साथ सबसे ज्यादा दुराचार या जोर-जबर्दस्ती परिवार के भीतर ही होती है। और तो और, पिता के हाथों बेटियों के बलात्कार के भी न जाने कितने मामले आ चुके हैं। पैदा होते ही लड़कियों को मार देना, या पैदा न होने देना, अंधविश्वास के कारण बच्चों की बलि चढ़ाना, 'जोगिनी' या 'देवदासी' जैसे रीति-रिवाजों और परंपराओं के नाम पर लड़कियों को देवताओं को अर्पित कर देना – ये सारी प्रथाएं घर में होने वाली हिंसा के ही कुछ रूप हैं। कम उम्र में ही बच्चों को ब्याह देना उनके प्रति प्रेम की निशानी हो ही नहीं सकती। यह तो अपने बच्चे के पालन-पोषण और देखभाल की जिम्मेदारी किसी और के सिर मढ़ देने का बहाना है भले ही इससे बच्चे की सेहत और दिमाग पर जो असर पड़े!

इन दर्दनाक स्थितियों के अलावा छोटे पैमाने पर भी बच्चे तरह-तरह से हिंसा के शिकार बनते हैं। क्या

इस बात को झुठलाया जा सकता है कि लगभग हर घर में बच्चों के साथ मारपीट एक सामान्य बात बनी हुई है।

3. लड़कों के बारे में फिक्र क्या करना? उन्हें हिफाजत की जरूरत नहीं है।

ध्यान रखें कि कम उम्र के लड़के भी शारीरिक एवं मानसिक शोषण के उतने ही खतरे में रहते हैं जितने खतरे में लड़कियां रहती हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि समाज में अपनी कमजोर हैसियत के कारण लड़कियों की स्थिति ज्यादा नाजुक होती है लेकिन लड़कों को भी सुरक्षा जरूर मिलनी चाहिए। स्कूल में और घर पर लड़कों को पीटा जाता है, बहुत सारे लड़कों को मजदूरी के लिए भेजा और यहां तक कि बेच दिया जाता है। बहुत सारे लड़के यौन शोषण का शिकार बनते हैं।

हमारे गांव में तो ऐसा नहीं होता!

सब यही मानते हैं कि 'ऐसी बातें हमारे यहां नहीं होतीं। और कहीं होती होंगी।' हमारे घर, हमारे गांव या हमारे समुदाय में ऐसा नहीं होता। ये बातें हमारे बच्चों पर नहीं, 'औरों' के बच्चों पर असर डालती हैं। हकीकत यह है कि उत्पीड़न का शिकार बच्चा इनमें से कहीं भी हो सकता है और उसे हमेशा मदद व सहारे की जरूरत होती है। आइए उत्पीड़न के कुछ सामान्य स्वरूपों को देखें और समझें कि बच्चों की सुरक्षा के लिए पंचायत सदस्य के रूप में आप क्या कर सकते हैं।[1]

बच्चों के लिए एक सुरक्षात्मक वातावरण की रचना या सुदृढ़ीकरण के आठ मुख्य तत्व ये हैं:

- *सरकारी प्रतिबद्धता और क्षमता*
- *कानून और उसको लागू करना*
- *संस्कृति और रीति-रिवाज*
- *खुली चर्चा*
- *बच्चों की निपुणता, ज्ञान और हिस्सेदारी बढ़ाना*
- *परिवारों और समुदायों का क्षमतावर्धन*
- *मूलभूत सेवाएं*
- *निगरानी एवं रिपोर्टिंग*

जनता के प्रतिनिधि होने के नाते आपकी एक अहम भूमिका है।

१ नोटः बच्चों के लिए एक सुरक्षात्मक वातावरण की रचना करने के लिए कई स्तर पर प्रयास करना पड़ता है। इसके लिए एक साझा विश्लेषण पर आधारित संवाद, साझेदारी और समन्वय की जरूरत होती है। इस तरह के वातावरण के बहुत सारे तत्व बुनियादी सुविधाओं में सुधार, नतीजों की निगरानी और व्यक्तियों को अपने विकास का वाहक मानने जैसी पद्धतियों और परंपरागत विकास गतिविधियों से मिलते-जुलते होते हैं।

बच्चों की सुरक्षा से जुड़े मुद्दे

आप क्या कर सकते हैं

अपने गांव के बच्चों की बेहतर हिफाजत और देखभाल के लिए आप, आपकी पंचायत और पंचायत के अन्य सदस्य कुछ खास कदम उठा सकते हैं।

इस बात को समझें कि बच्चों के अधिकार भी मानवाधिकार हैं। इस बारे में औरों को भी जागरूक बनाएं।

जब भी ग्राम सभा की बैठक हो, वहां बाल अधिकार के मुद्दों पर चर्चा जरूर करें।

इस बात का ध्यान रखें कि बच्चों की सुरक्षा का सवाल ग्राम पंचायत और ग्राम सभा की सभी बैठकों की कार्यसूची का हिस्सा बने।

बच्चों और उनके माता-पिता की सहायता से अपने गांव में आप एक बाल सुरक्षा निगरानी समिति का भी गठन कर सकते हैं। यह इकाई गुमशुदा बच्चों और देखभाल व सुरक्षा के जरूरतमंद बच्चों का ब्यौरा रख सकती है ताकि बाल उत्पीड़न या बच्चों के साथ हिंसा की किसी भी घटना को पुलिस या अन्य महकमों की जानकारी में लाया जा सके।

सभी पंचायत सदस्यों के पास सरकारी योजनाओं और उनके फायदे-नुकसान की जानकारी होनी चाहिए। ऐसे बच्चों ओर परिवारों की पहचान करें जिन्हें सहायता की जरूरत है और जिन्हें किसी मौजूदा सरकारी योजना के जरिए मदद दी जा सकती है। इस तरह के बच्चों और परिवारों की सूची आप अपने ब्लॉक/तालुका/मंडल पंचायत सदस्य या बीडीपीओ को खुद दे सकते हैं।

अगर आप अपने गांव में बच्चों को सुरक्षा देना चाहते हैं तो आपको इन लोगों के साथ संपर्क में रहना चाहिएः

- *पुलिस*
- *आपके पंचायत सचिव*
- *स्कूल शिक्षक/शिक्षिका*

- *आंगनवाड़ी कर्मचारी*
- *एएनएम*
- *ब्लॉक/तालुका/मंडल एवं जिला पंचायत सदस्य*
- *ब्लॉक विकास अधिकारी (बीडीओ) या ब्लॉक विकास एवं पंचायत अधिकारी (बीडीपीओ)*
- *समुदाय विकास अधिकारी (सीडीओ) या समुदाय विकास एवं पंचायत अधिकारी (सीडीपीओ)*
- *जिला मजिस्ट्रेट/जिला कलेक्टर*

आपकी पंचायत कुछ खास मुद्दों पर भी कदम उठा सकती है। मसलन:

लिंग चयन के आधार पर गर्भपात और शिशु हत्या

पैदा होने का अधिकार!

बेटा पैदा होता है तो हम ढोल बजाते हैं। घर में किसी की मौत होती है या लड़की पैदा होती है तो मिट्टी के बर्तन फोड़ते हैं। इसका मतलब तो यही हुआ कि लड़की का जन्म किसी की मौत जितना ही बुरा होता है!

साल 2001 की जनगणना से पता चलता है कि हमारे देश में हर 1,000 पुरुषों पर औरतों की संख्या केवल 933 रह गई है।

बच्चों में यह अनुपात और भी खराब दिखाई देता है। बच्चा-बच्ची का अनुपात 1991 की जनगणना से गिरता जा रहा है। 1991 में 1000 लड़कों पर 945 लड़कियां थीं जबकि 2001 में 1000 लड़कों पर केवल 927 लड़कियां रह गई थीं।

लिंग चयन पर आधारित गर्भपात या बालिका भ्रूण हत्या और बालिका शिशु हत्या की घटनाएं बढ़ती जा रही हैं। जो लड़कियां जन्म ले लेती हैं उनमें से भी बहुतों को उपेक्षा भरा जीवन जीना पड़ता है।

औरतों की संख्या में यह गिरावट सब जगह एक जैसी नहीं है। आर्थिक रूप से ज्यादा संपन्न और खाते-पीते राज्यों में सबसे भयानक स्थिति है। पंजाब, हरियाणा और हिमाचल प्रदेश में हालत बहुत ही खराब है। हर 1,000 मर्दों पर औरतों की संख्या पंजाब में 798, हरियाणा में 819 और हिमाचल प्रदेश में 896 है। यहां तक कि देश की राजधानी दिल्ली में भी हर 1,000 लड़कों पर लड़कियों की संख्या 900 से नीचे जा चुकी है। जाहिर है, जिनके पास ताकत है वे पैसा खर्च करके ये पता लगा लेते हैं कि पेट में पल रहा बच्चा लड़का है या लड़की। इस जानकारी

के आधार पर बहुत सारी लड़कियों को पेट में ही मार दिया जाता है।

काफी दिनों तक लोग इस गलतफहमी में भी रहे कि बालिका शिशु हत्या की परंपरा अब हमारे यहां खत्म हो चुकी है। लेकिन यह प्रथा तो आज भी जिंदा है। कई राज्यों के अपराध संबंधी रिकॉर्ड्स में शिशु हत्या की रिपोर्टें मौजूद हैं।

देश भर में शिशु हत्या की जितनी घटनाएं होती हैं उनमें से 34.1 प्रतिशत अकेले मध्य प्रदेश में हो रही हैं। इसके बाद उत्तर प्रदेश (27.0 प्रतिशत), छत्तीसगढ़ (5.3 प्रतिशत) तथा राजस्थान (4.8 प्रतिशत) का स्थान आता है।

इस बात की कोई गारंटी नहीं है कि अगर कोई लड़की भ्रूण हत्या या शिशु हत्या के अभिशाप से बच भी जाए और 0-6 साल के आयु वर्ग में है, तो वह आगे चल कर और जिंदा रहेगी। पर्याप्त भोजन न देकर, घर की चारदीवारी में बंद रख कर, बहुत सारा काम सौंप कर, समय पर इलाज और दवा से वंचित रख कर बच्चियों को मार देना कोई आश्चर्यजनक बात नहीं है।

हरियाणा में लड़कियों व औरतों की संख्या कम होती जा रही है। नतीजा, लड़कों के लिए दुल्हन नहीं हैं। अब यहां के कई लोग दूसरे राज्यों की कम उम्र लड़कियों/औरतों को खरीद कर लाते हैं और उनका यौन शोषण करते हैं। पश्चिम बंगाल, बिहार और असम से इस तरह की 'दुल्हनों' का इंतजाम करने में दलाल अहम भूमिका निभाते हैं।

बालिका भ्रूण हत्या के लिए अकसर लोगों की गरीबी और आर्थिक मजबूरियों का हवाला दिया जाता है।

हर साल 1.2 करोड़ लड़कियां पैदा होती हैं। उनमें से 30 लाख लड़कियां पंद्रहवें जन्मदिन तक मौत के मुंह में चली जाती है। इन 30 लाख में से लगभग एक तिहाई लड़कियां जिंदगी का पहला साल भी पूरा नहीं कर पातीं। अनुमान लगाया जाता है कि हर छठी लड़की/औरत की मौत लैंगिक भेदभाव के कारण होती है।

ह्यूमन डिवेलपमेंट रिपोर्ट, यूएनडीपी, 2005

लिंग आधारित गर्भपात इतनी बड़ी बात क्यों है?

- क्योंकि, लड़के और लड़की, दोनों को ही जिंदा रहने का बराबर अधिकार है। हमारा संविधान भी किसी के साथ पक्षपात की छूट नहीं देता।
- क्योंकि इस तरह की हिंसा के कारण लड़कियों के साथ होने वाली हिंसा और बढ़ जाती है, जैसे कि, जिन राज्यों में लड़कियों की संख्या कम हैं वहां के लोग शादी के लिए लड़कियों को खरीद कर लाते हैं।

- अगर 1 से 5 साल की उम्र के लड़के और लड़कियों की संख्या में आ रहे फासले को दूर कर दिया जाए तो 1.3 लाख बच्चे असमय मरने से बच जाएंगे और बाल मृत्यु दर में 5 प्रतिशत की कमी आ जाएगी।

समाज की हर विकृति के लिए गरीबी को कब तक जिम्मेदार ठहराया जाएगा?

बालिका भ्रूण हत्या और शिशु हत्या के खिलाफ एक लंबी लड़ाई छेड़ना जरूरी है। अलग-थलग रहकर इस तरह की भयानक विकृति से नहीं लड़ा जा सकता। दहेज, औरतों की बेरोजगारी और अल्प-रोजगारी, शोषण, लड़कियों की खराब शैक्षणिक स्थिति और समय से पहले पढ़ाई छोड़ देने की भारी-भरकम दर, कम उम्र में विवाह और लैंगिक भेदभाव जैसी सामाजिक कुरीतियों से हमें साथ-साथ लोहा लेना होगा।

गलतफहमियां	*सच क्या है*
बुढ़ापे में बेटे ही मां-बाप की देखभाल करते हैं। बेटियां तो ब्याह करके ससुराल चली जाती हैं।	*वृद्धाश्रमों को जाकर देखने पर पता चलता है कि लड़के अपने मां-बाप की कितनी फिक्र करते हैं! ऐसे बहुत सारे मामले हमारे सामने हैं जहां शादीशुदा लड़कियों ने ही बुढ़ापे और बेसहारेपन के हालात में अपने मां-बाप को सहारा दिया है।*
लड़कियां कमा कर नहीं लातीं इसलिए वे तो परिवार पर बोझ होती हैं। ऊपर से उनकी शादी करना भी आसान नहीं होता।	*ये सिर्फ एक बहाना है। हकीकत ये है कि लड़कियां भी काम करके पैसा कमा कर लाती हैं। साथ ही, वे घर के सारे काम करती हैं और बुजुर्गों व भाई बहनों की देखभाल करती हैं। जब वे घर का कामकाज संभालती हैं तो उसका मूल्य एकदम से दिखायी नहीं देता इसलिए उसे महत्व नहीं दिया जाता है। लेकिन सच तो यह है कि उनका यह योगदान परिवार को चलाने के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है।*
	हम ऐशो-आराम के बढ़ते चलन और दहेज व शादी में फिजूलखर्ची पर रोक लगाने की बड़ी-बड़ी बातें तो खूब करते हैं लेकिन करते कुछ नहीं हैं। हमारा घमंड और झूठी इज्जत हमें सादगी से जीने से रोक देते हैं। हम जिम्मेदारी लेने से कतराते हैं, सिर्फ दौलत इकट्ठा करना चाहते हैं और चाहे किसी लड़की की जान लेनी पड़े, हम सिर्फ ऐशोआराम और मजे की जिंदगी जीना चाहते हैं।
वंश तो सिर्फ बेटों से चलता है। चिता को आग भी बेटा देता है।	*इन मान्यताओं को चुनौती दी जानी चाहिए। ये समाज की पितृसत्तात्मक संरचना का हिस्सा हैं।*
	इस तरह की मान्यताएं और बेटे की चाह घर की संपत्ति को घर में रखने और ज्यादा से ज्यादा संपत्ति इकट्ठा करने की इच्छा से पैदा हुई है।

कानून क्या कहता है?

लिंग आधारित गर्भपात का अपराध करने वालों को सजा देने के लिए खासतौर से एक कानून बनाया गया है। इस कानून को 'प्रसव पूर्व निदान तकनीक (नियमन एवं दुरुपयोग निषेध) कानून, 1994' (Pre-Natal Diagnostic Techniques (Regulation And Prevention of Misuse) Act, 1994.) के नाम से जाना जाता है।

- यह कानून बालिका भ्रूण हत्या के लिए भ्रूण के लिंग का पता लगाने वाली निदान तकनीक के दुरुपयोग और प्रचार को रोकता है।
- यह कानून खास तरह की आनुवांशिक विकृतियों या कमियों का पता लगाने के लिए प्रसव-पूर्व निदान तकनीक के इस्तेमाल की इजाजत देता है और उसे नियंत्रित करता है। इस तरह की तकनीक का केवल खास परिस्थितियों में और पंजीकृत संस्थानों के द्वारा ही इस्तेमाल किया जा सकता है।
- यह कानून इन प्रावधानों का उल्लंघन करने वालों को सजा देता है।
- इस कानून के तहत सबसे पहले संबंधित अधिकारी को शिकायत दी जानी चाहिए। यदि वह अधिकारी 30 तीस दिन में भी कार्रवाई नहीं करता है तो शिकायत देने वाला अदालत में जा सकता है।

इस कानून के अलावा भारतीय दंड संहिता, 1860 के निम्नलिखित प्रावधान भी महत्वपूर्ण हैं:

भारतीय दंड विधान (आईपीसी), 1860 के मुताबिक किसी भी व्यक्ति द्वारा किए गए निम्नलिखित कृत्य दंडनीय अपराध हैं:

- अगर किसी व्यक्ति के हाथों किसी की मृत्यु होती है (धारा 299 और धारा 300)।
- किसी गर्भवती महिला को जान-बूझकर ऐसी स्थिति में डालना जिसमें उसका अजन्मा शिशु मर जाए (धारा 312)
- बच्चे के मृत पैदा होने या जन्म के बाद मर जाने की इच्छा के साथ किया गया कार्य (धारा 315)
- किसी अजन्मे शिशु की मृत्यु के हालात पैदा कर देना (धारा 316)
- 12 साल से कम उम्र के बच्चों को छोड़ देना या खतरे में डालना (धारा 317)
- नवजात शिशु को फेंक कर या ठिकाने लगाकर उसके जन्म को छिपाना (धारा 318)।
- यह सजा दो साल की जेल या जुर्माने या दोनों के रूप में हो सकती है।

पंच क्या कर सकते हैं?

- लोगों को कानून की शिक्षा दे सकते हैं।
- चौकस रहें और भ्रूण हत्या व शिशु हत्या को रोकने के लिए बनाए गए कानूनों का इस्तेमाल करें। अगर कोई ऐसा करता है तो उसके खिलाफ मामला दर्ज करवाएं।
- अपनी पंचायत की देख रेख में गांव में होने वाले हर जन्म और मृत्यु का पंजीकरण करवाएं।
- जन शिक्षा कार्यक्रमों के जरिए जागरूकता और महिलाओं के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाएं।
- समुदाय को इस तरह के जघन्य अपराधों के खिलाफ एकजुट करें।
- गांव की एएनएम और दाइयों से बात करें। उनसे आपको ऐसी घटनाओं की खबर मिल सकती है।
- अल्ट्रासाउंड टेक्नोलॉजी का गलत इस्तेमाल करके अपनी जेब भरने के लिए लिंग परीक्षण करने वाले झोलाछाप नीम-हकीमों और क्लीनिकों के खिलाफ मुहिम चलाएं।

बाल विवाह

हमारे देश में बाल विवाह की प्रथा हमेशा बड़े पैमाने पर रही है। आज भी यह देश के बहुत सारे हिस्सों में प्रचलित है। हैरानी की बात है कि 21वीं सदी में भी यह प्रथा इतने बड़े पैमाने पर मौजूद है। उत्तरी भारत में अक्खा तीज पर बहुत सारे बच्चों को ब्याह दिया जाता है। इन इलाकों में इसे बहुत पवित्र दिन माना जाता है। देश के कई भागों में रामनवमी, शिवरात्रि, बसंत पंचमी और अन्य त्यौहारों पर बच्चों की शादियां होती हैं। ये परंपराएं स्थानीय समाज के रीति-रिवाज, मूल्य मान्यताओं और सोच से पैदा हुई हैं। सच तो यह है कि अब तो बाल विवाह की समस्या ने और भी भयानक रूप धारण कर लिया है।

- रीति-रिवाज के नाम पर और आगे चल कर ज्यादा दहेज से बचने के लिए छोटे-छोटे लड़के-लड़कियों की शादी कर दी जाती है।
- पंजाब और हरियाणा आदि बहुत सारे राज्यों तथा राजस्थान व गुजरात के कई भागों में लड़कों के मुकाबले लड़कियों की संख्या इतनी कम रह गई है कि इन राज्यों के लड़के दूसरे राज्यों से लड़कियां खरीद कर उनसे शादी करने पर मजबूर होते जा रहे हैं।
- कम उम्र की लड़कियों को खरीदने-बेचने और उनसे वेश्यावृत्ति करवाने के लिए शादी एक साधन बन गई है। अधेड़ उम्र के मर्दों से शादी की कानूनी आड़ में कम उम्र की लड़कियों को अकसर बहुत भयानक हालात में धकेल दिया जाता है। ऐसी बहुत सारी लड़कियों की जिंदगी तो वेश्यावृत्ति की अंधेरी दुनिया में जाकर खत्म हो जाती है।

बाल विवाह बाल अधिकारों के खिलाफ क्यों है?

- कम उम्र में शादी से बच्चों का बचपन नष्ट हो जाता है।
- बाल विवाह के कारण बच्चे, खासतौर से लड़कियां पढ़ाई-लिखाई से महरूम रह जाती हैं।
- इससे बच्चे की शारीरिक और मानसिक सेहत पर बहुत बुरा असर पड़ता है।
- शारीरिक रूप से अपरिपक्व लड़कियां अगर बच्चे को जन्म देती हैं तो उनकी सेहत और भी ज्यादा खतरे में पड़ जाती है।
- बाल विवाह का मतलब है बच्चे के साथ बलात्कार क्योंकि तब तक बच्चे ऐसे गंभीर फैसले लेने की उम्र में नहीं होते हैं।

- बाल वधुएं अकसर कम उम्र में ही विधवा हो जाती हैं और उन्हें कई बच्चों की देखभाल करनी पड़ती है।
- लड़कियों की तरह कम उम्र में लड़कों की शादी भी उनके अधिकारों का उल्लंघन है। इससे फैसला करने का उनका अधिकार छिन जाता है और उनकी उम्र और क्षमता से ज्यादा बड़ी जिम्मेदारियां उनके कंधों पर आ जाती हैं।

साल 2001 की जनगणना के मुताबिक 15 साल से कम उम्र की लगभग 3 लाख लड़कियां पहले ही कम से कम एक बच्चे को जन्म दे चुकी हैं।

20 से 24 साल की युवतियों के मुकाबले 10 से 14 साल की लड़कियों के सामने गर्भावस्था या प्रसव के कारण मरने का खतरा पांच गुना ज्यादा होता है।

कम उम्र में गर्भधारण से गर्भपात की आशंका भी ज्यादा रहती है।

किशोर माओं से पैदा होने वाले बच्चों का वजन जन्म के समय अकसर कम होता है।

कम उम्र माओं के बच्चों की पहले साल में ही मर जाने की आशंका ज्यादा होती है।

स्रोतः दि सिचुएशन ऑफ यंग वीमेन (www.un.org/esa/socdev/unyin/documents/ch09.pd)

गलतफहमियां	*सच क्या है?*
बाल विवाह हमारी संस्कृति का हिस्सा है	*संस्कृति के नाम पर किसी भी गलत या हानिकारक परंपरा को सही नहीं ठहराया जा सकता। अगर बाल विवाह हमारी संस्कृति है तो दासता, जातिवाद, दहेज, सती आदि प्रथाओं को आप क्या कहेंगे? ये भी हमारी संस्कृति का हिस्सा रहे हैं। लेकिन अब हम इन प्रथाओं को रोकने के लिए बाकायदा कानून बना चुके हैं। जब भी समाज के भीतर से आवाज उठी है, इस तरह के कानून बनाए गए हैं।* *संस्कृति स्थिर नहीं रहती। न ही पूरे भारत की संस्कृति एक-समान है। अलग-अलग समुदायों की अलग-अलग संस्कृतियां होती हैं भले ही वे पास-पास ही क्यों न रहते हों। भारत में बहुत सारे जातीय, भाषायी और धार्मिक समुदाय हैं जिनकी अपनी-अपनी संस्कृति है। लिहाजा, भारत की संस्कृति में इन सबका सम्मिश्रण है और समय के साथ इनमें बहुत सारे बदलाव आ चुके हैं।* *अगर हम सब इस बात पर सहमत हो जाएं कि बच्चों की हिफाजत जरूरी है तो हमारी संस्कृति में भी यह बात झलकनी चाहिए। सांस्कृतिक रूप से हमें एक ऐसे समाज के रूप में आगे बढ़ना चाहिए जो न*

केवल अपने बच्चों को प्यार करने का दावा करता है बल्कि जो वास्तव में हर वक्त उन्हें प्यार और सुरक्षा देता है।

लड़कियों का काम होता है घर का काम करना। पढ़ाई लिखाई उन्हें बिगाड़ देती है।

पढ़ाई-लिखाई का हक लड़कियों को भी उतना ही है जितना लड़कों को। अगर उन्हें शिक्षा नहीं दी जाती है तो लैंगिक भेदभाव और गरीबी के चक्र को नहीं तोड़ा जा सकता।

जैसा कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था, "एक आदमी को पढ़ाओगे तो एक आदमी पढ़ेगा, एक औरत को पढ़ाओगे तो पूरा समाज शिक्षित हो जाएगा।"

बलात्कार और यौन शोषण का खतरा कुआंरी लड़कियों पर ज्यादा होता है।

चाहे औरत शादीशुदा हो या कुआंरी, जवान हो या बूढ़ी, पर्दे में हो या बेपर्दा, कोई भी बलात्कार और यौन शोषण का शिकार बन सकती है। औरतों के खिलाफ होने वाले अपराधों के ब्यौरों से इस बात की पुष्टि होती है।

कानून क्या कहता है?

1. **बाल विवाह निषेध अधिनियम,** 2006 में 21 साल से कम उम्र के लड़कों और 18 साल से कम उम्र की लड़कियों को बच्चा माना गया है (धारा 2(ए))।

2. इस कानून के तहत बाल विवाह को अवैध और शून्य करार दिया गया है। यह कानून बाल विवाह से जुड़े वर या वधु को विवाह को शून्य घोषित करवाने का विकल्प प्रदान करता है (धारा 3 (1))।

3. इस कानून के तहत बाल विवाह की अनुमति देने, विवाह तय करने, विवाह करवाने या समारोह में हिस्सा लेने वाले लोगों को सजा दी जा सकती है। इस कानून के मुताबिक:

   क. अगर कोई पुरुष 21 साल से अधिक उम्र का है और बाल विवाह करता है तो उसे दो वर्ष तक का कठोर कारावास या एक लाख रुपए तक का जुर्माना या दोनों ही सजाएं मिल सकती हैं (धारा 9)।

   ख. बाल विवाह करवाने वाले व्यक्ति को दो वर्ष तक के साधारण कारावास तथा एक लाख रुपए तक के जुर्माने की सज़ा दी जा सकती है (धारा 10)।

   ग. बाल विवाह को बढ़ावा देने या उसकी अनुमति देने की सजा दो वर्ष तक का कठोर कारावास तथा एक लाख रुपए तक का जुर्माना है (धारा 11 (1))।

क्या किसी बाल विवाह को रोका जा सकता है?

4. बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006 के अंतर्गत अगर कोई व्यक्ति पुलिस या बाल विवाह निषेध अधिकारी

के पास यह शिकायत दर्ज करवाता है कि इस तरह की शादी तय की गई है या इस तरह की शादी होने जा रही है तो उसे रोका जा सकता है। शिकायत के आधार पर पुलिस या सीएमपीओ (चाइल्ड मैरिज प्रोहिबिशन ऑफिसर या बाल विवाह निषेध अधिकारी) जांच करके मामले को मजिस्ट्रेट की नजर में लाते हैं। इसके जवाब में मजिस्ट्रेट उस शादी को रोकने का आदेश जारी कर सकता है (धारा 13)।

5. अगर कोई व्यक्ति अदालत के आदेश को मानने से इनकार करता है तो उसे दो वर्ष तक के साधारण कारावास की सजा दी जा सकती है या उस पर एक लाख रुपए तक का जुर्माना किया जा सकता है या उसे दोनों सजाएं दी जा सकती हैं।

6. बाल विवाह को विवाह होने से पहले ही रोकना जरूरी होता है क्योंकि कानून में दी गई उम्र की शर्तों का उल्लंघन करके की गई शादी अपने आप अवैध और निरर्थक नहीं हो जाती है।

7. बाल विवाह से पैदा हुई संतान को कानूनन जायज़ माना गया है, भले ही वह विवाह कानून की नजर में अवैध एवं शून्य करार दिया गया हो (धारा 6)।

पंच क्या कर सकते हैं?

- *लोगों को कानून की शिक्षा दे सकते हैं।*
- *बाल अधिकारों के उल्लंघन और कम उम्र में विवाह से सेहत के लिए पैदा होने वाले खतरों के बारे में जागरूकता फैला सकते हैं।*
- *लोगों को इस बात के लिए समझा सकते हैं कि वे अपने बच्चों के बालिग होने पर ही उनकी शादी करें।*
- *बाल विवाह की सूचना अधिकृत व्यक्तियों को देकर आप उसकी रोकथाम करने और अपराधियों को सजा दिलवाने में मदद कर सकते हैं।*
- *चौकस रहें और बाल विवाह को रोकने के लिए कानून का इस्तेमाल करें। पुलिस को सही जानकारी दें और उन्हें अपनी बात पर यकीन दिलाएं।*
- *अगर बाल विवाह को नहीं रोका जा सकता है तो दूल्हे और दुल्हन के मां-बाप को इस बात के लिए राज़ी करें कि वे शादी को तब तक टाल दें जब तक दोनों बच्चे कानून के हिसाब से बालिग न हो जाएं। तब तक के लिए दोनों बच्चों को पढ़ाने-लिखाने के लिए उनके मां-बाप को समझाएं।*

2003 में हरियाणा के एक गांव की महिला सरपंच को पता चला कि 10 साल की कविता की शादी 40 साल के एक आदमी से होने जा रही है। यह पता चलते ही सरपंच ने गांव जाकर बच्ची को इस संकट से निकाला क्योंकि कुछ ही देर में उसके घर वाले टैक्सी लेकर विवाह स्थल की ओर रवाना होने वाले थे। इसके लिए सरपंच ने स्थानीय पुलिस से मदद ली और कविता को बाल विवाह से बचाकर उसके पियक्कड़ पिता को गिरफ्तार करवाया। इस तरह का साहसिक कदम उठाने के लिए सरपंच को अपने गांव में भारी विरोध का सामना करना पड़ा। लेकिन अगर उसने समय पर हस्तक्षेप न किया होता और यह शादी हो जाती तो आज कविता इतनी छोटी सी उम्र में न जाने कितने संकटों में फंसी होती।

बाल मजदूरी

बाल मजदूरी और बच्चों से काम करवाना, इन दोनों बातों को बहुत सारे लोग एक ही मानते हैं। ये दोनों चीजें अलग-अलग हैं।

बाल मजदूरी का मतलब ये होता है कि अपना और अपने परिवार का पेट पालने के लिए बच्चे को शारीरिक श्रम करना पड़ रहा है। इसमें उसे कमरतोड़ मेहनत और शोषण का सामना करना पड़ता है। ऐसी स्थिति में बाल मजदूर के सारे अधिकार नष्ट हो जाते हैं। ऐसे बच्चे पढ़ाई-लिखाई, खेल-कूद, भरपेट खाना—हर चीज से वंचित रह जाते हैं। अगर बच्चे घर में या समाज में छोटे-मोटे काम करें, जिससे उन्हें शारीरिक या मानसिक क्षति न हो, उनके किसी हक का उल्लंघन न हो तो उसे बाल श्रम या बाल मजदूरी नहीं कहा जाएगा।

दुनिया भर में सबसे ज्यादा बाल मजदूर भारत में हैं। हमारे यहां बच्चों को स्कूल से निकाल कर मजदूरी पर भेजना एक सामान्य बात मानी जाती है।

बच्चे बहुत सारे काम करते हैं। बाल मजदूरी के कुछ क्षेत्र इस प्रकार हैं:

- खेती
- मैन्युफैक्चरिंग (कालीन, ज़री, परिधान, बीड़ी, कांच, पटाखा उत्पादन आदि)।
- खदानों में पत्थर तोड़ना
- घरेलू नौकरी
- होटल, रेस्टोरेंट
- सर्कस
- भवन निर्माण
- झींगे की खेती

जनगणना 2001 के मुताबिक 5-14 साल की उम्र के 1.25 करोड़ बच्चे विभिन्न व्यवसायों में नौकरी करते हैं। गैर-सरकारी संगठनों (एनजीओ) का मानना है कि ऐसे बच्चों की संख्या कहीं ज्यादा है क्योंकि असंगठित क्षेत्र और छोटे कारखानों में काम करने वाले बहुत सारे बच्चों को कभी बाल मजदूर की श्रेणी में नहीं रखा जाता है। ईंट के भट्ठों, पत्थर की खदानों, कालीन और ज़री उद्योग में काम करने वाले बच्चे सिलिकोसिस, सांस की समस्याओं, पीठ दर्द, कमजोर नज़र और पेशे से संबंधित अन्य बीमारियों के शिकार होते हैं।

बाल मजदूरी : बच्चों पर इसका असर

कार्यस्थल पर बच्चे कई तरह के जोखिम, स्वास्थ्य संबंधी खतरों और शोषण भरी स्थितियों के खतरे में आ जाते हैं।

बच्चों के शिक्षा संबंधी अधिकारों का हनन होता है।

बच्चों की शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और सामाजिक बेहतरी के लिए खतरा पैदा होता है।

बचपन में काम करने का असर यह होता है कि बच्चे :

- त्वचा रोग, फेफड़ों में विकार, नजर की कमजोरी, टीबी, सिलिकोसिस आदि व्यावसायिक बीमारियों की चपेट में आ सकते हैं।
- शारीरिक एवं यौन शोषण के खतरे में आ जाते हैं।
- ऐसी शिक्षा हासिल नहीं कर पाते जो उन्हें जीवन में बेहतर अवसर मुहैया करवा सके।
- शिक्षा और व्यावसायिक प्रशिक्षण नहीं मिलता, वे बिना किसी काबिलियत के बड़े होते हैं और बालिग होने पर अर्थव्यवस्था में उल्लेखनीय योगदान नहीं दे पाते। फलस्वरूप, वे गरीबी के चक्र को नहीं तोड़ पाते।

बच्चों को घरेलू नौकर के तौर पर रखना एक आम बात है। हम में से कोई भी, यहां तक कि हमारे नेता भी इसे शोषण नहीं मानते। हाल ही में हमारे देश के एक बड़े नेता के घर में काम करने वाले 15 साल की घरेलू नौकरानी ने खुदकुशी कर ली। वह इस बात से डरी हुई थी कि उसके हाथ से टोस्टर टूट गया था। सज़ा के डर से उसने मौत को गले लगा लिया।

यह सिर्फ एक बच्चे की कहानी नहीं है... बहुत सारी लाचार लड़कियों की जिंदगी ऐसी ही है!

बारह साल की सुनीता अपने चाचा के साथ झारखंड के एक दूरदराज गांव से दिल्ली आई थी—काम की तलाश में। वह यहां घरेलू नौकरानी बन गई। सुनीता सवेरे 4 बजे उठती थी और रात को 11 बजे तक काम करती थी। मालिक उसे रोज पीटता था। कई बार वह गर्म चाकुओं से उसके शरीर को गोदता था। उसे भर पेट खाना कभी नहीं मिला। उसके सोने की जगह बहुत अंधेरी और सीलन भरी थी। उसे अपने चाचा से भी मिलने की छूट नहीं थी। एक बार उसने घर से भागने की कोशिश की तो मालिक ने उसे पकड़ लिया। पिटाई तो हुई ही, उसे दो दिन तक खाना भी नहीं मिला। आखिरकार एक दिन वह भाग निकलने में कामयाब हो गई। लेकिन उसे कुछ पता नहीं था कि कहां जाए या अपने चाचा या अपने परिवार से कैसे संपर्क करे। इसी तरह भटकते-भटकते सुनीता को सड़क पर एक औरत मिली जो उसकी मदद करने को तैयार थी। लेकिन इस औरत ने तो सुनीता को वेश्यालय में पहुंचा दिया। हाल ही में पुलिस ने उसे एक वेश्यालय से रिहा कराया है। फिलहाल वह बच्चों के लिए बनाए गए एक ऑब्ज़र्वेशन होम में रह रही है। उसे अपने मां-बाप का इंतजार है ताकि वे उसे वापस घर ले जाएं।

देश के विभिन्न भागों में बहुत सारे दलाल और बिचौलिये आम लोगों के शुभचिंतक बनकर गांवों में जाते हैं और नौकरी के लिए उनके बच्चों को उड़ा ले जाते हैं। बिहार और बंगाल के बच्चे कर्नाटक, दिल्ली या मुंबई के सिलाई-कढ़ाई कारखानों में काम कर रहे हैं; तमिलनाडु के बच्चे उत्तर प्रदेश में हलवाइयों के पास काम कर रहे हैं, सूरत में हीरे और गहनों की पॉलिश में लगे हैं। हजारों बच्चे मध्यवर्गीय घरों में नौकर हैं।

बच्चों के लिए नौकरी करना क्यों गलत है?

किसी भी जाति, वर्ग या इलाके के किसी भी लड़के या लड़की को जिंदगी में आगे बढ़ने, स्वस्थ रहने और आराम व आनंदभरा जीवन बिताने के लिए शिक्षा एवं अन्य साधनों का अधिकार मिला है। अगर कोई चीज, कोई भी नौकरी किसी बच्चे के इन अधिकारों का हनन करती है तो वह गलत है।

अमीर और गरीब बच्चों के लिए अलग अधिकार नहीं हो सकते। है कि नहीं?
अगर गरीब बच्चे नौकरी करना छोड़ दें तो उनके परिवार कैसे चलेंगे?

ज्यादातर कामकाजी बच्चे खेतिहर मजदूर हैं जहां उनकी आमदनी इतनी मामूली होती है कि उससे घर चलाना वाकई बड़ी बात है। दरअसल बहुत सारे बच्चे तो सिर्फ इसलिए काम कर रहे हैं क्योंकि स्कूल में उन्हें मजा नहीं आता, उन्हें पढ़ने का कोई मतलब दिखाई नहीं देता।

अगर आप एक बच्चे को मजदूरी से हटा लेते हैं तो आप बड़ों के लिए एक और नौकरी पैदा कर देते हैं। हमारे देश में बेरोजगार वयस्कों की आबादी बहुत बड़ी है। वे इन बच्चों की जगह ले सकते हैं। ऐसे में ये बच्चे अपने बचपन को मुकम्मल तौर पर जी पाएंगे। साथ ही स्कूलों पर ध्यान देना होगा और उन्हें ऐसा बनाना होगा कि बच्चे वहां से भागें नहीं।

गलतफहमी	*सच क्या है?*
बच्चों को काम पर रखकर मालिक उन पर अहसान करते हैं। काम नहीं करेंगे तो भूखे मर जाएंगे।	*मालिकों की दिलचस्पी सिर्फ मुनाफे में है। इसके लिए बच्चों से अच्छा मजदूर भला कौन मिलेगा जो बिना वेतन या बहुत मामूली वेतन पर बिना मुंह खोले लंबी-लंबी पालियों में काम करते चले जाते हैं।*
बच्चे तो खुद ही काम करना चाहते हैं।	*यह कहना गलत है कि वे काम करना चाहते हैं। या काम करना पसंद करते हैं। बच्चे स्कूल के मुकाबले मजदूरी को ज्यादा तरजीह अकसर इस कारण भी देते हैं क्योंकि वहां सुविधाएं नहीं होतीं, स्कूल की पाठ्यचर्या उनके मुताबिक नहीं होती और अध्यापकों का बर्ताव खराब होता है।*
बाल मजदूरी का सबसे बड़ा कारण तो गरीबी है।	*बाल मजदूरी के पीछे सामाजिक कारणों का भी हाथ रहता है। सामाजिक रूप से निम्न तबके के समुदाय सामाजिक ऊंच-नीच के शिकार बनते हैं। संसाधनों तक सारे समुदायों को बराबर पहुंच नहीं मिलती।*
अगर बच्चे काम न करें तो उनके घर वाले भूखों मर जाएंगे।	*देखने में आया है कि जब सारे घर वाले और बच्चे नौकरी करते हैं तब भी भुखमरी खत्म नहीं होती। परिवार वाले फिर भी भूखे और गरीब ही रहते हैं। भुखमरी तो अन्यायपूर्ण सामाजिक और आर्थिक हालात की उपज है।*
मां-बाप ही बच्चों को स्कूल की बजाय काम पर भेजना चाहते हैं।	*बच्चों को स्कूल भेजने के मामले में मां-बाप की हिचकिचाहट तो कई बार इस वजह से भी पैदा होती है क्योंकि स्कूल में बच्चे का दाखिला बहुत मुश्किल हो गया है। बच्चों को स्कूल में दाखिला दिलाने में जन्म प्रमाणपत्र का न होना भी एक समस्या बन जाती है।*
गैर-खतरनाक व्यवसायों में बच्चों को काम पर रख लेने में कोई खराबी नहीं है।	*अगर बच्चों को लंबे समय तक काम करने के लिए मजबूर किया जाता है और उन्हें विकास, शिक्षा, चिकित्सा, देखभाल, मनोरंजन, विश्राम और खेलने-कूदने का अधिकार नहीं मिलता है तो कोई भी नौकरी उनके लिए खतरनाक साबित हो सकती है।*
अगर बच्चे काम करते हैं तो वे भविष्य के लिए एक नया हुनर सीखते हैं।	*बच्चे आमतौर पर अकुशल श्रमिक ही होते हैं। खतरनाक रसायनों के संपर्क में आने से उनकी सेहत को नुकसान पहुंचता है और उनका विकास रुक जाता है।*

बाल मजदूरी को खत्म किया ही नहीं जा सकता।

बाल मजदूरी को खत्म करने का काम बड़ा तो है लेकिन नामुमकिन नहीं है। अब समय आ गया है कि हम इस चुनौती का सामना करने के लिए तैयार हो जाएं। यह समस्या संसाधनों की कमी से पैदा नहीं हुई है। समस्या यह है कि हमारे पास इच्छाशक्ति ही नहीं है।

स्रोत : चाइल्ड लेबर : इंडिया प्रोफाइल *(www.free the children.org/youthinaction/child_labour_facts_myths.htm)*

संविधान में 6–14 साल की उम्र के बच्चों को निःशुल्क और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा का अधिकार दिया गया है। बाल मजदूरी का चलन इस अधिकार का उल्लंघन करता है।

कानून क्या कहता है?

संविधान की धारा 23 तमाम तरह की जबरिया और बंधुआ मजदूरी पर पाबंदी लगाती है।

संविधान की धारा 24 कहती है कि 14 साल से कम उम्र के किसी भी बच्चे को किसी फैक्ट्री या खदान में या किसी भी दूसरे खतरनाक व्यवसाय में काम पर नहीं रखा जा सकता।

संविधान की धारा 39 राज्य नीति को निर्देश देती है कि "पुरुष और स्त्री कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों में न जाना पड़े जो उनकी आयु या शक्ति के अनुकूल न हों।" यह भी प्रावधान किया गया है कि "बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वस्थ विकास के अवसर और सुविधाएं दी जाएं और बालकों और अल्पवय व्यक्तियों की शोषण से तथा नैतिक और आर्थिक परित्याग से रक्षा की जाए।"

बाल मजदूरी (निषेध एवं नियमन) कानून, 1986 "14 साल से कम उम्र के बच्चों को कुछ खास खतरनाक व्यवसायों और प्रक्रियाओं में काम पर रखने पर पाबंदी लगाता है।"

यूएनसीआरसी, 1989 की धारा 32 कहती है कि "सभी सरकारें बच्चों के इस अधिकार को मान्यता देंगी कि उन्हें आर्थिक शोषण और खतरनाक या बच्चे की शिक्षा के लिए हानिकारक साबित होने वाले या बच्चे के शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक, नैतिक अथवा सामाजिक विकास व स्वास्थ्य के लिए हानिकारक साबित होने वाले कामों से बचाया जाना चाहिए।"

पंच क्या कर सकते हैं?

- बच्चों को काम पर भेजने के खतरों के बारे में जागरूकता पैदा करें।
- मां-बाप को इस बात के लिए तैयार करें कि वे अपने बच्चों को स्कूल भेजें।
- धीरे-धीरे एक ऐसा माहौल बनाएं जिसमें बच्चों को काम से निकाल कर स्कूल भेजा जा सके।
- इस बात का खयाल रखें कि बच्चों को बिना किसी परेशानी के स्कूल में दाखिला मिले।
- इस बात का खयाल रखें कि स्कूल नजदीक हो और वहां जरूरी सुविधाएं, जैसे ब्लैक बोर्ड, बैठने की सुविधा, शौचालय आदि उपलब्ध हों।
- मालिकों को बताएं कि बाल मजदूरी के खिलाफ कानून बन चुका है और इस कानून को न मानने से उनके लिए क्या परेशानियां हो सकती हैं। उन्हें बच्चों को काम पर रखने से रोकें और बड़ों को काम पर रखने के लिए प्रोत्साहित करें।
- इस बात पर ध्यान दें कि बड़ों को न्यूनतम वेतन जरूर मिले।
- अपनी पंचायती हैसियत का इस्तेमाल करके बालवाड़ी और आंगनवाड़ी आदि मौजूदा सरकारी कार्यक्रमों के जरिए डे-केयर की व्यवस्था करें ताकि छोटे बच्चों की माएं काम पर जा सकें और बच्चों को अपने छोटे भाई-बहनों की देखभाल के लिए पढ़ाई न छोड़नी पड़े।
- ऐसे दलालों और बिचौलियों के खिलाफ कमर कस लें जो गांवों में बाल मजदूरों की टोह में रहते हैं और उन्हें लेकर उड़ जाते हैं।
- स्कूलों तक पहुंच और शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार लाने, शिक्षकों की गैर-हाजिरी, दाखिले और बच्चों के पढ़ाई छोड़ देने, दोपहर बाद भोजन, स्कूल में पानी और सफाई सुविधाओं की व्यवस्था आदि मुद्दों पर ध्यान देने के लिए ग्राम शिक्षा समिति को सक्रिय करें।

बाल यौन शोषण

यौन शोषण के शिकार बच्चों की सबसे ज्यादा तादाद हमारे देश में है। भारत में हर 155 मिनट में 16 साल से कम उम्र के किसी न किसी बच्चे के साथ बलात्कार होता है, 10 साल से कम उम्र का एक बच्चा हर 13 घंटे में बलात्कार का शिकार बनता है और प्रत्येक 10 में से एक बच्चा किसी भी समय यौन शोषण का शिकार हो रहा होता है। इसके बावजूद, बच्चों के खिलाफ होने वाली इस हिंसा को अखबारों में या चर्चाओं में जगह नहीं मिलती। यहां तक कि उसे स्वीकार तक नहीं किया जाता। ये घटनाएं घरों में भी घटती हैं और घर से बाहर भी।

आप इस बात से सहमत होंगे कि यौन शोषण बच्चों के अधिकारों का सबसे भीषण उल्लंघन है। बाल अधिकारों के इस हनन से बाल पीड़ितों और उनके परिवारों पर दीर्घकालिक दुष्परिणाम पड़ते हैं।

सच है कि यौन शोषण की आशंका लड़कियों के सामने ज्यादा रहती है। लेकिन, प्रचलित मान्यता के विपरीत लड़कों को भी इस खतरे का खूब सामना करते हैं। 2003-04 में मौलाना आजाद मेडिकल कॉलेज के सामुदायिक चिकित्सा एवं मनोविज्ञान विभाग में कार्यरत दीप्ति पगारे, जी एस मीणा, आर सी जिलोहा एवं एम एम सिंह द्वारा किए गए अध्ययन - **'सेक्शुअल एब्यूज ऑफ स्ट्रीट चिल्ड्रन ब्रॉट टू ऐन ऑब्जर्वेशन होम'** - में दिल्ली के एक ऑब्जर्वेशन होम में लाए गए लड़कों के साथ हुए यौन शोषण की व्यापकता और रुझानों को समझने का प्रयास किया गया था। इस अध्ययन से पता चला कि 61.1 प्रतिशत बच्चों के शरीर पर और 40.2 प्रतिशत बच्चों के व्यवहार में यौन शोषण के लक्षण दिखाई दे रहे थे। 44.4 प्रतिशत पीड़ितों का कहना था कि उनके साथ जबरन यौन संबंध बनाए गए। 25 प्रतिशत बच्चे ऐसे लक्षणों से ग्रस्त थे जिनसे पता चलता था कि वे यौन संक्रामक बीमारियों की चपेट में आ चुके हैं। हद तो ये है कि कुछ माह ही नहीं, बल्कि केवल कुछ दिन की उम्र के बच्चे भी इस तरह के दुराचार के शिकार पाए गए हैं।

दिमागी और शारीरिक विकलांगता वाले बच्चों के सामने यह खतरा और भी ज्यादा रहता है।

यौन शोषण का अपराधी बच्चे का परिचित भी हो सकता है और अजनबी भी। 90 प्रतिशत मामलों में अपराधी व्यक्ति बच्चे का परिचित और विश्वासपात्र पाया गया है। ऐसा व्यक्ति आमतौर पर भरोसे के संबंधों का फायदा उठाता है और अपनी ताकत का दुरुपयोग करके बच्चे को अपना शिकार बनाता है। बहुत सारे मामलों में तो अपराधी व्यक्ति बच्चे का कोई घनिष्ठ संबंधी ही होता है - जैसे, पिता, बड़ा भाई, चचेरा भाई या चाचा या पड़ोसी आदि। जब अपराधी व्यक्ति परिवार का सदस्य होता है तो इस तरह की घटना को कौटुंबिक व्यभिचार (incest) कहा जाता है।

यौन शोषण या किसी यौन कृत्य को जबरन देखने के लिए मजबूर किए जाने की बेचैनी के बारे में बच्चे किसी

को कुछ भी बताने से डरते हैं। कौटुंबिक व्यभिचार के मामले में तो इस चुप्पी को तोड़ना बच्चों के लिए और भी मुश्किल हो जाता है। परिवार के टूटने या अविश्वास के डर से बच्चे किसी को कुछ नहीं बता पाते। मां-बाप तथा घर के बड़े लोग, बल्कि स्वयं समाज उनकी बेचैनी को नजरअंदाज करके बच्चों के साथ बार-बार होने वाले यौन शोषण या दुराचार को छुपाने की कोशिश करता चला जाता है।

जब बच्चे किसी यौन शोषण की घटना के बारे में बताते हैं तो कई बार उन पर ही शक किया जाता है। इस तरह उनके भरोसे और आत्मविश्वास को ठेस पहुंचती है। बच्चे के भीतर अपराधबोध पैदा करके उसे ये अहसास भी कराया जाता है कि किसी न किसी तरह उसके व्यवहार और आचरण ने ही दुराचार करने वाले को उकसाया होगा।

स्रोत : सीमेंटिक्स ऑर सब्टेंस?
सबग्रुप अगेंस्ट दि सेक्शुअल एक्सप्लॉयटेशन ऑफ चिल्ड्रेन, एनजीओ ग्रुप फॉर दि कनवेंशन ऑन दि राइट्स ऑफ दि चाइल्ड, जनवरी 2005

कई बार सांस्कृतिक और सामाजिक कारण भी यौन शोषण को बढ़ावा देते हैं। इससे लड़कियों व औरतों के यौन शोषण की संभावना खासतौर से बढ़ जाती है। इन्हीं सामाजिक-सांस्कृतिक कारणों से ऐसा दुराचार छिप जाता है, उपेक्षित रह जाता है या उसे सामान्य अनुभव का हिस्सा मान लिया जाता है।

बाल यौन शोषण क्या होता है?

- अगर किसी बच्चे के साथ किसी भी तरह का यौन संबंध बनाया जाता है या उसे इस काम के लिए इस्तेमाल किया जाता है या उसे गंदी चीजें दिखाई जाती हैं तो यह बाल यौन शोषण कहलाता है। इसमें बच्चे की सहमति हो या न हो, चाहे अपराधी व्यक्ति अपनी यौन संतुष्टि के लिए ऐसा कर रहा हो या किसी और की यौन संतुष्टि के लिए, इस तरह के कृत्य को बाल यौन शोषण ही कहा जाएगा।
- बाल यौन शोषण या बच्चे पर यौन हमले का मतलब हमेशा ये नहीं होता कि उसके साथ बलात्कार ही हुआ हो। बच्चों के साथ कई तरह के यौन शोषण होते हैं। बलात्कार भी उनमें से एक है।
- यौन शोषण वाली गतिविधियों का हमेशा यह मतलब नहीं होता कि बच्चे और उसके साथ दुराचार करने वाले के बीच आपस में कोई शारीरिक संबंध या संपर्क हो ही। बच्चे को गंदी चीजें दिखाना या ताक-झांक करना भी दुराचार की श्रेणी में आता है। उदाहरण के लिए, अगर कोई वयस्क किसी बच्चे को नहाते हुए या कपड़े उतारते हुए देखता है या कोई व्यक्ति दो या अधिक बच्चों को आपस में यौन गतिविधियां करने के लिए मजबूर करता है या उनकी फिल्म बनाता है तो यह भी यौन शोषण माना जाएगा। इस तरह के दुराचार में शारीरिक संपर्क नहीं होता।
- बाल यौन शोषण तब होता है जब कोई वयस्क या कद काठी अथवा उम्र के हिसाब से जिम्मेदार व्यस्क या दूसरा बच्चा किसी बच्चे को यौन संतुष्टि के लिए इस्तेमाल करता है।

आम धारणा यह है कि जब बच्चे के साथ बलात्कार होता है तो वही बाल यौन शोषण कहलाता है। यह सोच गलत है। अगर बलात्कार न हुआ हो तो भी बच्चा यौन शोषण का शिकार हो सकता है।

बाल यौन शोषण के कई रूप हैं। कई तरह के यौन शोषण में शारीरिक संपर्क ज्यादा होता है इसलिए ऐसी घटनाएं ज्यादा आसानी से पकड़ में आ जाती हैं। कई बार बाल यौन शोषण ज्यादा छोटे पैमाने पर होता है लेकिन उससे भी बच्चे को वैसा ही नुकसान पहुंच सकता है। यहां हमने जितनी तरह के बाल यौन शोषण का जिक्र किया है उनके अलावा भी कई अन्य प्रकार के दुराचार हो सकते हैं।

यौन छेड़छाड़

इस तरह की छेड़छाड़ आमतौर पर शारीरिक तौर से बच्चे के लिए बहुत दर्द भरी नहीं होती। बच्चे को सहलाना, थपथपाना, चूमना, आपस में हस्तमैथुन करना, गंदी बातें करना और अश्लील इशारे करना इसी श्रेणी में आते हैं।

बलात्कार

भारतीय समाज में समलैंगिक और विषमलैंगिक, दोनों तरह के यौन संबंधों में शिश्न को जबरन दूसरे व्यक्ति के गुदा या योनि में डालना बलात्कार माना जाता है।

कौटुंबिक व्यभिचार (incest)

इस तरह का दुराचार तब होता है जब अपराधी व्यक्ति परिवार का ही सदस्य हो या परिवार के सदस्यों जितना ही नजदीकी हो।

कौटुंबिक व्यभिचार वैध या अवैध रूप से आपस में संबंधित दो लोगों के बीच होता है। एक ही वंश के सगे या सौतेले रिश्तेदार, भाई-बहन, चाचा-चाची, भतीजा-भतीजी आदि के बीच यौन संबंधों को कौटुंबिक व्यभिचार कहा जाता है।

कई बच्चों के साथ यह दुराचार उनकी शैशव अवस्था, बचपन या किशोरावस्था में, यानी कभी भी शुरू हो सकता है। कुछ बच्चों के साथ एकाध बार ही ऐसा होता है जबकि कई बच्चों के साथ बार-बार इस तरह की हरकतें की जाती हैं।

हमारे देश में कौटुंबिक व्यभिचार को बाल यौन शोषण का सबसे आम रूप माना जाता है। दिल्ली स्थित संगठन साक्षी ने 1997 में एक अध्ययन किया था। इस अध्ययन से पता चला कि दिल्ली की 63 प्रतिशत लड़कियों ने परिवार के ही किसी सदस्य के हाथों बचपन में यौन शोषण या जोर-जबर्दस्ती का सामना किया है। राही (रिकवरिंग

ऐण्ड हीलिंग फ्रॉम इनसेस्ट) द्वारा किए गए एक और अध्ययन में पांच राज्यों की 1,000 लड़कियों से बात की गई। इस अध्ययन में 50 प्रतिशत लड़कियों ने कहा कि 12 साल की उम्र से पहले ही उनके साथ यौन शोषण की घटनाएं हो चुकी थीं। 35 प्रतिशत लड़कियों ने 12 से 16 साल की उम्र के बीच इस तरह की घटनाओं को झेला था। परिवार के प्रति वफादारी के रवैये को देखते हुए इस तरह की चीजों पर चर्चा करना बहुत मुश्किल होता है। लिहाजा, ऐसे दोषियों को अकसर सजा नहीं मिल पाती।

लौंडेबाज़ी (sodomy)

जब कोई पुरुष किसी के साथ जबर्दस्ती गुदा मैथुन करता है तो उसे लौंडेबाजी कहा जाता है। वैसे तो लड़कियां और लड़के, दोनों ही इस प्रकार के दुराचार के शिकार हो सकते हैं लेकिन इस शब्द का इस्तेमाल आमतौर पर लड़कों के मामले में ही ज्यादा किया जाता है।

बच्चे के साथ इनमें से किसी भी प्रकार का दुराचार हो सकता है :

- शिश्न प्रवेश या वस्तुओं या शरीर के अन्य अंगों के माध्यम से संभोग करना।
- बच्चों को गंदी फिल्में/तस्वीरें आदि दिखाना-सुनाना और इस तरह की गंदी चीजें तैयार करने के लिए बच्चों का इस्तेमाल करना।
- किसी चीज या शरीर के किसी हिस्से से बच्चे के शरीर को छू कर यौन संतुष्टि हासिल करना।
- गंदे इरादों के साथ अपने गुप्तांग या शरीर के अन्य भागों को दिखाना।
- यौन गतिविधि दिखाकर या दो या ज्यादा बच्चों को आपस में सेक्स के लिए मजबूर करके मजे लेना।
- अश्लील फिकरे कसना या भद्दी एवं गंदी भाषा या भाव-भंगिमाओं से किसी बच्चे को अपमानित करना।

उत्पीड़क व्यक्ति किस किस तरह से काम करते हैं:

- वे अपने शिकार को तैयार करते हैं और उसे नियंत्रित करते हैं। यह काम थोड़े-से समय में भी हो सकता है और उसमें कई साल भी लग सकते हैं।

  इस प्रक्रिया के दो फायदे होते हैं। एक तो पीड़ित बच्चे को चुप रखने में मदद मिलती है और दूसरे, कई बार बच्चे के घरवाले भी खामोश रहते हैं। इससे अपराध के उजागर हो जाने की संभावना बहुत कम हो जाती है और सब कुछ सामान्य दिखाई देता रहता है।

- वे बच्चे को डरा-धमका कर, शर्मिंदा करके या भ्रमित करके अपनी बात मानने के लिए मजबूर करते हैं। इसके लिए उत्पीड़क व्यक्ति बच्चे को डराते-धमकाते हैं या उसको मजबूर करते हैं या और किसी तरह से

परेशान करते हैं। कई बार दुराचार के लिए बच्चे को तैयार करने के वास्ते इस तरह की धमकियां भी दी जाती हैं कि उसके घर के किसी आदमी को मार दिया जाएगा या किसी बच्चे को उठवा लिया जाएगा।

- उत्पीड़क व्यक्ति अपहरण, धोखाधड़ी या जालसाजी के जरिए बच्चे के नजदीक पहुंच जाता है।
- वह अपनी ताकत या बच्चे की कमजोर हैसियत का फायदा उठाता है।
- वे तोहफे, पैसे आदि देकर या बच्चे के हक की चीजें उसे न देकर बच्चे को अपने जाल में फंसाये रखते हैं।

यौन शोषण से बच्चों पर क्या असर पड़ते हैं?

दुराचार का असर अल्पकालिक और दीर्घकालिक, दोनों तरह का हो सकता है।

- बच्चे को चोट लग सकती है। उदाहरण के लिए बच्चे के शरीर पर खरोंच, मुंह से काटने या छिलने के निशान हो सकते हैं। संभव है उसके गुप्तांगों से खून बह रहा हो या शरीर में कहीं और चोट लगी हो।
- कई बार बच्चे दब्बू बन जाते हैं, खुद को ही गलत माने लगते हैं। कई बच्चे निराशा, बेचैनी और बड़े होने पर यौन संबंधों ठंडेपन के शिकार हो जाते हैं। ऐसे बच्चे अकसर परिवार से कटे-कटे से दिखाई देने लगते हैं।
- बहुत सारे बच्चे वयस्क होने पर समस्याओं से घिर जाते हैं। वे सही यौन संबंध कायम नहीं कर पाते।
- यौन शोषण से सिर्फ बच्चे के शरीर और मन को ही ठेस नहीं पहुंचती। उसका भरोसा भी टूट जाता है जिसके कारण वह लंबे समय तक अस्थिर रहता है। कई बार ऐसा बच्चा जीवन भर सामान्य नहीं हो पाता और अगर उसका दिमागी इलाज न कराया जाए तो उसके सारे संबंधों पर असर पड़ता है।

सलीम केरल में नदी किनारे बसे एक गांव में काम करता था। उसे रसोई के कामों में हाथ बंटाने का काम सौंपा गया था। धीरे-धीरे वह अपने गांव में आने वाले विदेशी सैलानियों से मेलजोल बढ़ाने लगा। वह उनके सामने नाचता-गाता था। कभी-कभी वह उनके कमरों में जाकर उनकी मालिश भी करता था। मालिश के बदले सैलानी उसे तोहफे या पैसे दे देते थे। आज सलीम शर्माते हुए यह स्वीकार करता है कि कुछ सैलानियों ने उसके साथ यौन संबंध भी बनाए थे। इस ब्यौरे से साफ जाहिर होता है कि सलीम बाल दुराचार का शिकार हुआ है।

स्रोतः सिचुएशनल स्टडी ऑन चाइल्ड सेक्स टूरिज्म इन इंडिया. वेइंग दि गेट्स ऑन ए डिवेलपमेंट स्केलः दि केस ऑफ टूरिज़्म इन गोवा, इंडिया, इक्वेशंस, नवंबर 2002. www.ecpat.net/eng/Ecpat_inter/projects/sex_tourism/Equations%20Presnetaion%20(india%South).ppt)

गलतफहमियां	सच क्या है ?
यौन शोषण सिर्फ लड़कियों के साथ होता है बाल यौन शोषण केवल गरीबों, मेहनत मेहनत-मजदूरी करने वालों, बेरोजगार या अशिक्षित परिवारों में ही होता है। मध्य वर्ग में ऐसा नहीं होता। शहरों और कस्बों में ऐसा होता है लेकिन गांवों में ऐसा नहीं होता।	जी नहीं। लड़के और लड़कियां, दोनों ही यौन शोषण का शिकार बनते हैं हालांकि लड़कियों पर इस बात का खतरा ज्यादा होता है। ऐसा सोचना गलत है। बाल यौन शोषण की समस्या हर वर्ग, जाति या इलाके के लड़के-लड़कियों, दोनों को झेलनी पड़ती है। बच्चा शहर का है या गांव का, इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता।
बाल यौन शोषण एक पश्चिमी अवधारणा है	यौन शोषण की समस्या शुरू से ही हमारे समाज में रही है। लड़कियों को वेश्यावृत्ति के लिए बेचना या देवदासी अथवा जोगिनी जैसी धार्मिक व सांस्कृतिक प्रथाओं के लिए मंदिरों-मठों में अर्पित कर देना इस बात की मिसाल हैं। अब इस तरह की नाइंसाफी के बारे में जागरूकता बढ़ रही है। ये घटनाएं बार-बार खबरों में आने लगी हैं। बालिग औरतों के बीच किए गए अध्ययनों से पता चलता है कि उनमें से 75 प्रतिशत ने अपने बचपन में किसी न किसी तरह के दुराचार का सामना किया था। इन 75 प्रतिशत में से भी आधी से ज्यादा महिलाएं ऐसी थीं जो परिवार के सदस्यों या परिचितों के हाथों दुराचार का शिकार बनीं। पश्चिम पर दोष मढ़ने की सोच दरअसल इस कठोर सच्चाई को नकारने में मदद देती है।
परिवार से सुरक्षित जगह कोई नहीं होती। बच्चों के साथ यौन शोषण तो सिर्फ अजनबी करते हैं	यह मान्यता भी गलत है। ज्यादातर मामलों में यौन अपराधी परिवार के ही सदस्य या बच्चे की जान-पहचान वाले होते हैं।
उत्पीड़न करने वाला व्यक्ति मनोरोगी या दिमागी तौर पर बीमार होता है।	यह सोचना गलत है कि बच्चों का यौन शोषण करने वाले दिमागी तौर पर पागल होते हैं। आमतौर पर वे बिल्कुल सामान्य और विभिन्न प्रकार की पृष्ठभूमि वाले लोग होते हैं। बाल यौन शोषण करने वाले लोग अपने कृत्य को सही ठहराने के लिए तरह-तरह से कोशिश करते हैं। पागलपन भी इसी तरह का एक बहाना है।
बच्चे/किशोर अकसर मनगढ़ंत कहानियां गढ़ लेते हैं। वे यौन शोषण के झूठे किस्से सुनाते हैं।	असलियत ये है कि जब बच्चे इस तरह की घटनाओं के बारे में बताते हैं तो ज्यादातर वे सच ही बोल रहे होते हैं। मनगढ़ंत कहानियों के इस आरोप और कौटुंबिक व्यभिचार/बाल यौन शोषण की बातों पर समाज में फैले अविश्वास के कारण कई बार पीड़ित बच्चा ही शक के घेरे में घिर जाता है।

गलतफहमियां	सच क्या है ?
बच्चे ही बड़ों को उकसाते हैं और अपने साथ सेक्स करने के लिए उत्तेजित करते हैं	यह वयस्क अपराधी की सोच है। बच्चे आमतौर पर निर्दोष और कमजोर स्थिति में होते हैं। न तो उन्हें सेक्स का कुछ खास पता होता है और न ही वयस्कों की यौनिकता का। वयस्कों के बर्ताव के लिए उन्हें कतई जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता। यह दलील अपराधी की बजाय बच्चे को ही दोषी ठहराने की एक चाल होती है।
कौटुंबिक व्यभिचार/बाल यौन शोषण सिर्फ 'गंदी' लड़कियों के साथ होता है। जरा उसके रंग-ढंग तो देखो; वह अच्छी लड़की नहीं है।	इस तरह के बयान असल में पीड़ित को ही जिम्मेदार ठहराने का काम करते हैं। ये वक्तव्य कौटुंबिक व्यभिचार/बाल यौन शोषण को झुठलाने या उसको मामूली बात साबित करने की कोशिश करते हैं। सच तो ये है कि बच्चे का 'समाज विरोधी' या 'अजीबो-गरीब' आचरण कई बार उसके साथ हुए यौन शोषण का कारण नहीं बल्कि उसका नतीजा होता है।
अगर बच्चा किशोर या ज्यादा उम्र का है तो उसे सेक्स के बारे में जरूर पता होगा। ऐसे में तो उसी की जिम्मेदारी है कि वह किसी को अपने साथ ऐसा न करने दे या औरों को इसके बारे में बताए।	इस बात से कोई फर्क नहीं पड़ता कि बच्चे की उम्र क्या है। दुराचार करने वाले की ताकत हमेशा उससे ज्यादा होती है। पीड़ित बच्चा उत्पीड़क की चालाकियों का मुकाबला नहीं कर सकता। न तो उसके पास दुराचार को रोकने के साधन होते हैं और न ही औरों को इसके बारे में बताने की ताकत होती है। अगर अपराधी व्यक्ति परिवार का ही सदस्य या कोई नजदीकी रिश्तेदार है तब तो बच्चे की ताकत और भी घट जाती है। अगर बच्चा सेक्स के बारे में समझने लगा है तो इसका ये मतलब नहीं है कि वह इस तरह के हालात से निपटने का तरीका भी जान जाएगा।
बच्चे ने ही रजामंदी दी थी	बच्चे के मामले में 'रजामंदी' का कोई मतलब नहीं होता। जहां तक कानून की बात है, 16 साल से कम उम्र की लड़की के साथ किसी भी हालत में किया गया संभोग बलात्कार ही माना जाता है।
लोग अपनी बेटियों या दूसरे बच्चों के साथ इसलिए सेक्स करते हैं क्योंकि उनकी पत्नियां उनके साथ सेक्स नहीं करती या उन्हें जिस्मानी तौर पर संतुष्ट नहीं कर पातीं।	बच्चों के साथ इस तरह के दुष्कृत्य करने वाले अपनी पत्नी/वयस्क साथी के साथ तो सेक्स करते ही हैं, इसके अलावा वे बच्चों के साथ भी सेक्स करते हैं। इस तरह की गलतफहमी से सारा दोष अपराधी की बजाय उसकी पत्नी या बच्चे की मां के माथे पर चला जाता है।
जाने-अनजाने में मांओं को हमेशा पता होता है की उनके बच्चे के साथ यौन शोषण हो रहा है।	यौन शोषण करने वाले इस बात का ध्यान रखते हैं कि कि उनकी हरकतों को कोई न देखे। जब पीड़ित बच्चे की मां को इस तरह की बातों का पता चलता है तो वह अकसर सदमे की हालत में पहुंच जाती है। जिन मांओं को यह पता होता है उनमें से भी कई की हालत इतनी कमजोर होती है कि वे इस तरह की हरकतों को नहीं रोक पातीं।

गलतफहमियां	सच क्या है ?
यह मां की ही जिम्मेदारी है कि वह अपने बच्चों का खयाल रखे। अगर वह बच्चों का खयाल नहीं रखती तो इसका मतलब है कि दुराचार में उसकी भी बराबर की जिम्मेदारी बनती है।	अगर कोई मां अपने बच्चों की रक्षा नहीं कर पाती है तो इसका यह मतलब नहीं है कि दुराचारी व्यक्ति की हरकतों के लिए मां को ही जिम्मेदार ठहरा दिया जाए। बच्चों की सुरक्षा हर वयस्क की जिम्मेदारी है। इसके लिए सिर्फ मां को जिम्मेदार नहीं माना जा सकता।
बच्चों के साथ दुराचार तो अजनबी ही करते हैं।	बाल दुराचार के ज्यादातर अपराधी परिवार के सदस्य या जान–पहचान वाले ही होते हैं। अजनबियों के पास बच्चे तक पहुंचने के ज्यादा रास्ते नहीं होते। न ही उनके पास इतने अवसर होते हैं जितने परिवार के सदस्यों या परिचितों के पास होते हैं।
जब कौटुंबिक व्यभिचार का संबंध प्रेमपूर्ण और देखभाल भरा हो तो बच्चे को कोई नुकसान नहीं होता।	यह सोच गलत है। कोई यौन संबंध बच्चे के लिए बेरहमी भरा या कोमल, दर्द भरा या आनंददायक हो सकता है लेकिन अंत में उससे बच्चे को नुकसान ही पहुंचता है। अगर अपराधी व्यक्ति बच्चे के प्रति बहुत लगाव और प्रेम दर्शाता है तो यह बच्चे के लिए और भी हानिकारक बात हो सकती है। मुमकिन है ऐसे उत्पीड़न का शिकार बच्चा खुद को ही दोषी मानने लगे, अपने ऊपर ही विश्वास गंवा दे।
कौटुंबिक व्यभिचार/ बाल यौनशोषण से कोई नुकसान नहीं होता। इससे बच्चे पर बुरा असर नहीं पड़ता।	किसी वयस्क के साथ यौन संबंध बनाने से किसी भी बच्चे पर अकसर बहुत लंबे असर पड़ते हैं। अगर वह व्यक्ति भरोसेमंद रिश्तेदार या परिवार का सदस्य है तो बच्चे को गहरा सदमा भी लग सकता है।
बच्चों के साथ सेक्स करना सुरक्षित होता है क्योंकि उनसे एड्स का वायरस नहीं फैलता।	ऐसा सोचना पागलपन है। यह मान्यता इस दलील पर आधारित है कि बच्चे एचआईवी से ग्रस्त नहीं होते इसलिए वे एड्स नहीं फैला सकते।
कुआंरी लड़की के साथ सेक्स से तो यौन संक्रामक बीमारियां ठीक हो जाती हैं	बच्चों या कुआंरी लड़कियों के साथ सेक्स करने के कारण आज तक किसी की यौन संक्रामक बीमारियां ठीक नहीं हुई। बल्कि सबसे खतरनाक बात तो यह है कि इन गलत धारणाओं की वजह से बच्चे ही यौन संक्रामक बीमारियों, आरटीआई और एचआईवी/एड्स के खतरे में आ जाते हैं। बच्चे के साथ सेक्स करने से उसके ऊपर यौन संक्रामक बीमारियों और/या एचआईवी वायरस की चपेट में आने का खतरा और बढ़ जाता है। बच्चे न तो इस बात के लिए दबाव डाल सकते हैं कि कंडोम का इस्तेमाल किया जाना चाहिए और न ही उन्हें सही गलत यौन पद्धतियों के बारे में पता होता है।

गलतफहमियां	हकीकत
अगर बाल यौन शोषण के बारे में रिपोर्ट दर्ज करायी जाती है तो फायदे की बजाय नुकसान ही ज्यादा होता है	ऐसा सोचना न केवल गलत है बल्कि इससे पीड़ित को ही नुकसान पहुंचता है। बाल यौन शोषण की घटनाओं को रिपोर्ट करना बहुत जरूरी है क्योंकि इससे अपराधियों में डर पैदा होता है और ऐसे बच्चों व अपराधियों के बारे में जानकारियां भी इकट्ठा हो जाती हैं। बहुत सारे लोग यह सोच कर बाल यौन शोषण के बारे में रिपोर्ट दर्ज नहीं कराते क्योंकि इससे बदनामी होती है। लोग इस वजह से भी डरे रहते हैं कि जटिल कानूनी कार्रवाई में पीड़ित बच्चे को और ज्यादा मानसिक आघात पहुंचता है। इस बात का भी डर रहता है कि कहीं अपराधी बदला न लेने लगे। लेकिन, अगर आप अपराध के बारे में रिपोर्ट दर्ज नहीं करवाएंगे तो समाज में यह अपराध बेरोक-टोक चलता रहेगा और दुनिया में इंसाफ नाम की चीज नहीं बचेगी। यौन शोषण का कोई हर्जाना नहीं हो सकता। अगर पीड़ितों को इंसाफ पाने में सहायता दी जाए तो वे अपना स्वाभिमान और आत्मविश्वास वापस हासिल कर सकते हैं। अगर उन्हें नाइंसाफी के खिलाफ लड़ने का मौका ही नहीं दिया जाता है तो उनकी स्थिति और खराब हो जाती है। न्याय पाने की प्रक्रिया से भी लोगों को ताकत मिलती है, उनका आत्मविश्वास बढ़ता है। अगर कानूनी कार्रवाई में पीड़ित बच्चे के साथ हमदर्दी का बर्ताव नहीं किया जाता है तो समाज को यही मांग करनी चाहिए कि कानून में सुधार किया जाए। न्याय की उम्मीद ही छोड़ देने से कोई हल नहीं निकलता।

राही फाउंडेशन द्वारा उपलब्ध कराई गई जानकारियों पर आधारित।
http://www.rahifoundation.org/incestchild

चाइल्ड सेक्स एब्यूज – टाइम फॉर ऐक्शन, प्रतिभा मेनन का लेख।
http://www.combatlaw.org/information.php?issue_id=16&article_id=399

कानून क्या कहता है?

सेक्स या यौन संतुष्टि के लिए किया गया कोई भी अनचाहा या जबरन हरकत यौन शोषण कहलाती है। बलात्कार, लौंडेबाज़ी, जोर-जबर्दस्ती और छेड़खानी, ये सब यौन शोषण की श्रेणी में ही आते हैं। लेकिन हमारा कानून कुछ खास तरह के यौन शोषण को ही अपराध मानता है। हमारे कानून में बच्चे के परिवार के किसी सदस्य या रिश्तेदार द्वारा किए गए यौन शोषण को अलग श्रेणी में नहीं रखा जाता है।

भारतीय दंड संहिता (इंडियन पीनल कोड)

भारतीय दंड संहिता में जिस-जिस तरह के बाल यौन शोषण को मान्यता दी गई है वे इस प्रकार हैं:

- किसी औरत या लड़की की इज़्ज़त पर हमला करना (धारा 354)
- बलात्कार (धारा 376)
- लौंडेबाजी या अप्राकृतिक अपराध (धारा 377)

आईपीसी में दी गई परिभाषा के हिसाब से बलात्कार तभी माना जाता है जब कोई व्यक्ति

- किसी औरत के साथ उसकी इच्छा या मर्जी के खिलाफ संभोग करता है,
- 16 साल से कम उम्र की लड़की के साथ उसकी मर्जी से या उसकी मर्जी के बिना संभोग करता है,
- 15 साल से कम उम्र की अपनी पत्नी के साथ संभोग करता है।

'संभोग' का मतलब है योनि में शिश्न को डालना। मुख मैथुन या किसी अन्य वस्तु को योनि अथवा गुदा में डालने को संभोग नहीं माना जाता है।

बलात्कार के लिए अधिकतम 7 साल के कारावास की सजा तय की गई है। अगर लड़की की उम्र 12 साल से कम हो या बलात्कारी कोई ऐसा व्यक्ति हो जिसे बच्चे की देखभाल का जिम्मा सौंपा गया हो (जैसे अस्पताल, बाल गृह या थाने में कार्यरत कोई व्यक्ति) तो ज्यादा सजा दी जाती है।

लड़के के साथ जबर्दस्ती सेक्स करना भी कायदे से तो बलात्कार ही होता है लेकिन हमारे देश के बलात्कार कानूनों में इसे बलात्कार नहीं माना गया है। इसे आईपीसी की धारा 377 के तहत अस्वाभाविक अपराध के रूप में देखा जाता है। लड़कों के साथ होने वाले यौन शोषण के लिए अलग से कोई कानून नहीं है।

पंच क्या कर सकते हैं?

- बाल यौन शोषण से निपटने के लिए सबसे पहले तो हमें इस बात को समझना चाहिए कि लड़कों और लड़कियों, दोनों को ही दुराचार का शिकार बनाया जाता है और दोनों को ही मदद व सुरक्षा की जरूरत होती है।

- समस्या के बारे में जागरूकता पैदा करें। इससे न केवल समस्या की रोकथाम करने में मदद मिलेगी बल्कि पीड़ितों को अपनी आपबीती कहने में भी मदद मिलेगी।
- ऐसे मंच तैयार कीजिए जहां बच्चों को शिक्षक/शिक्षिका, आंगनवाड़ी कर्मचारी और एएनएम की सहायता से गांव में ही सही जानकारियां और मदद मिलने लगे।
- बच्चे की बात गौर से सुनें।
- बच्चे का नाम-पता छिपा कर रखें।
- नजदीकी थाने में ऐसी हरेक घटना की शिकायत और एफआईआर जरूर दर्ज कराएं।
- कानूनी सलाह लें।

मानव व्यापार (ट्रैफिकिंग)

अगर निम्नलिखित तरीकों का इस्तेमाल करते हुए बच्चों को शोषण के लिए एक जगह से दूसरी जगह ले जाया जाता है तो उसे बाल व्यापार (चाइल्ड ट्रैफिकिंग) कहा जाता है:

> धमकी, जोर-जबर्दस्ती, अपहरण, जालसाजी, धोखाधड़ी, लालच या प्रलोभन या पैसे देना-लेना या अन्य फायदों के लिए।

लड़कियां और लड़के, दोनों को ही देश के भीतर और देश के बाहर ले जाकर बेचा जाता है। बहुत सारे बच्चों को देश के भीतर एक राज्य से दूसरे राज्य में और एक जिले से दूसरे जिले में ले जाकर बेच दिया जाता है। इनमें से बहुत सारे बच्चे एक देश से बिक कर दूसरे देश में पहुंच जाते हैं।

बच्चे को सबसे पहले जहां से उठाया गया था उस जगह को स्रोत क्षेत्र कहते हैं। यहां से बच्चे के शोषण का सिलसिला शुरू होता है। आखिर में बच्चे जहां पहुंच जाते हैं उसे अंतिम बिंदु कहा जाता है। इस दौरान बच्चा जहां-जहां से गुजरता है उन्हें आवागमन बिंदु कहा जाता है।

दो बच्चियां, एक शेख़

पहली अगस्त 2005 को यूएई के 45 वर्षीय शेख अल रहमान इस्माइल मिर्जा अब्दुल जब्बार ने हैदराबाद में चारमीनार के पास 70 साल की जैनब बी नाम की एक दलाल से संपर्क किया। दलाल ने शेख को 20,000 रुपए में दो लड़कियां हाजिर कर दीं। उनमें से एक का नाम फरहीन सुल्ताना और दूसरी का नाम हिना सुल्ताना था। उनकी उम्र 13 और 15 साल थी। इन लड़कियों की शेख से शादी करवा दी गई। शादी के पहले ही दिन यह साफ हो गया कि उसे सिर्फ एक रात के लिए लड़कियों की जरूरत थी। सुहागरात के बाद अरब का यह आदमी दोनों को छोड़ कर वापस अपने देश लौट गया। दलाल ने लड़कियों के घर वालों को वादा किया था कि उन्हें भी पैसे में हिस्सा मिल जाएगा। जब उन्हें पैसा नहीं मिला तो उन्होंने इस हादसे की जानकारी पत्रकारों को दे दी। इस तरह यह मामला सबकी नजर में आ गया।

स्रोत : वन माइनर गर्ल, मैनी एरब्स, टाइम्स ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, सोमवार, 5 **सितंबर** 2005.

बच्चों की खरीद-फरोख्त कई कामों के लिए की जाती है। खरीद-फरोख्त के कुछ कारण इस प्रकार हैं:

- यौन शोषण – जबरन वेश्यावृत्ति, सामाजिक और धार्मिक रूप से स्वीकृत वेश्यावृत्ति, सेक्स टूरिज्म और पॉर्नोग्राफी।
- गैर-कानूनी काम-धंधें – भीख मंगवाना, अंग व्यापार, नशीली दवाओं को पहुंचाना और तस्करी।
- मजदूरी – बंधुआ मजदूरी, घरेलू नौकरी, खेत मजदूरी, निर्माण कार्य, कालीन/परिधान उद्योग, हीरों की कटाई, झींगे की खेती आदि।
- मनोरंजन और खेल – कैमल जॉकी और सर्कस।
- गोद लेना
- शादी

मानव व्यापार विस्थापन के साथ गहरे तौर पर जुड़ा हुआ है। जब औरत, मर्द और बच्चे गरीबी या बेरोजगारी के कारण अपने गांव-कस्बे से निकल कर शहरों और सरहद पार दूर-दूर के इलाकों में काम की तलाश के लिए निकलते हैं तो यह खतरा बहुत बढ़ जाता है। अगर विस्थापित होने वाले अनपढ़ हों और उनको दुनिया की जानकारी न हो तो संभावित मानव व्यापारियों के जाल में फंसने की संभावना और बढ़ जाती है।

मानव व्यापार एक संगठित अपराध है। बताया जाता है कि दुनिया भर में हर साल 10 से 40 लाख लोगों को खरीदा-बेचा जाता है। यह संख्या सिर्फ उन लोगों की है जिन्हें खरीद कर एक देश से दूसरे देश में पहुंचा दिया जाता है। देश के भीतर होने वाले मानव व्यापार के आंकड़े इस संख्या में शामिल नहीं हैं। अगर देश के भीतर होने वाले मानव व्यापार के आंकड़ों का भी हिसाब लगाया जाए तो यह संख्या बहुत ज्यादा होगी।

मानव व्यापार का बच्चों पर असर

- *ऐसी सूरत में बच्चे का स्वस्थ और खुशहाल बचपन का अधिकार छिन जाता है।*
- *बच्चा शारीरिक और मानसिक रूप से विकलांग हो सकता है। कई बार तो बच्चे की मौत भी हो जाती है।*
- *मानव व्यापार के पीड़ित बच्चों के यौन शोषण की संभावना बहुत ज्यादा होती है। वे एचआईवी/एड्स जैसी खतरनाक जानलेवा बीमारियों के संपर्क में भी आ सकते हैं।*
- *ऐसे बच्चे न तो कोई हुनर सीख पाते हैं और न ही पढ़-लिख पाते हैं।*

जानकार बताते हैं कि अब यह कारोबार सालाना 400 अरब रुपए से भी ऊपर पहुंच चुका है।

कई बार तो मां-बाप ही अपने बच्चों को बेच देते हैं या गिरवी रख देते हैं। समुदाय के मुखिया की हैसियत से

सभी पंचों को कसम खानी चाहिए कि वे बाल व्यापार को रोकने के लिए हर जरूरी कदम उठाएंगे।

माना जाता है कि भारत में लगभग 200 लड़कियां व औरतें हर रोज वेश्यावृत्ति की दुनिया में धकेल दी जाती हैं। उनमें से 20 फीसदी की उम्र 15 साल की भी नहीं होती।

विभिन्न प्रकार के बाल व्यापार के बारे में पूरे आंकड़े अभी भी किसी के पास नहीं हैं। इसकी एक वजह ये है कि मजदूरी या शादी और इसी तरह के दूसरे कामों के नाम पर होने वाले बाल व्यापार को अपराध ही नहीं माना जाता।

गलतफहमियां	*सच क्या है ?*
बच्चे ने तो सहमति दे दी थी।	*बच्चों के मामले में सहमति का कोई मतलब नहीं होता। वैसे भी सहमति का मतलब तब बनता है जब सहमति देने वाला अपने फैसले का आगा-पीछा समझता हो। मानव व्यापार के मामले में तो वयस्क भी पूरी तरह अपना आगा-पीछा नहीं सोच सकते। मानव व्यापार या बाल व्यापार में तो सदा जोर-जबर्दस्ती, धमकी या उत्पीड़न, धोखाधड़ी या जालसाजी, लालच या प्रलोभन का ही सहारा लिया जाता है जिसके जाल में फंस कर बच्चा एक जगह से दूसरी जगह जाने को तैयार हो जाता है।*
लड़कियों को अरब के अमीरों के साथ ब्याह देने से कम से कम उनकी जिंदगी तो सुधर जाएगी	*अरब के अमीर आमतौर पर शादी करके थोड़े दिन तक ही अपना मन बहलाते हैं। उसके बाद या तो लड़कियों को छोड़ देते हैं या उन्हें अपने घर ले जाकर गुलामों की तरह रखते हैं।*
बच्चों को बड़े शहर में काम के लिए किसी रिश्तेदार या जानकार के पास भेजना ही अच्छा रहता है	*कई बार रिश्तेदार और दोस्त भी बड़े शहरों में जाकर कुछ हजार रुपयों के लिए बच्चे को दलाल के पास बेच देते हैं या उन्हें अपने फायदे के लिए मजदूरी पर लगा देते हैं।*
गोद लेने के लिए बच्चे को खरीदने-बेचने में क्या हर्जा है। इससे तो बच्चे का ही भला होता है।	*बच्चों को खरीदना और बेचना अपराध है। बच्चे कोई सब्जी-भाजी नहीं होते कि आप उन्हें बाजार में बेच दें। अगर किसी बच्चे को पता चलता है कि मां-बाप उसको बेच रहे हैं तो उसे कभी अच्छा नहीं लगेगा। लिहाजा, इससे बच्चे का भला कभी नहीं होता।* *इसमें कोई शक नहीं कि अगर मां-बाप अपने बच्चे की परवरिश ठीक से नहीं कर पा रहे हैं तो वे उसे किसी और को गोद दे सकते हैं। लेकिन इसके लिए एक तय कानूनी प्रक्रिया बनी हुई है। अगर बच्चे को गोद दिया जा रहा है तो कानूनी कार्रवाई पूरी होनी चाहिए। लेकिन, क्योंकि हमारे देश में गोद लेने के बारे में बनाए गए कानूनों को भी ठीक से लागू नहीं किया जा रहा है और देश भर में गोद लेने/देने वाले गिरोह पनप चुके हैं इसलिए हर मौके पर एहतियात बरतना जरूरी है। इसमें कई बार ये खतरा भी रहता है कि गोद देने के नाम पर आप अपने बच्चे को किसी ऐसे परिवार के हवाले कर दें जो बच्चों का शोषण करना चाहता है।*

कानून क्या कहता है?

हमारे कानून में 'मानव व्यापार' की कोई मुकम्मल परिभाषा नहीं है। बच्चों को बहुत सारे कामों के लिए खरीदा और बेचा जाता है। इस तरह के सभी प्रकार के बाल व्यापार से निपटने के लिए कोई एक कानून नहीं बनाया गया है। हमारे देश में मानव व्यापार का जिक्र सिर्फ एक कानून में आता है। उस कानून का नाम है अनैतिक व्यापार (रोकथाम) कानून। इस कानून में वेश्यावृत्ति के लिए नाबालिगों की खरीद-फरोख्त को गलत बताया गया है। बहरहाल, भारतीय दंड संहिता में कई ऐसे प्रावधान हैं और कई राज्यों में ऐसे कानून हैं जिनका बाल व्यापार की रोकथाम के लिए इस्तेमाल किया जा सकता है।

बाल व्यापार से निपटने के लिए मौजूद कानूनी रास्ते:

- भारतीय दंड संहिता (आईपीसी) 1860. आईपीसी में बच्चों या नाबालिगों के साथ ठगी, जालसाजी, अपहरण, उन्हें कब्जे में रखने, आपराधिक धमकी देने और अनैतिक कार्यों के लिए खरीदने या बेचने के लिए सजा का इंतजाम किया गया है।
- बाल न्याय (बच्चों की देखभाल और सुरक्षा) कानून, 2000. यह कानून खरीदे या बेचे गए बच्चे की देखभाल व सुरक्षा के लिए बनाया गया है। इसके जरिए उन्हें अपने घरवालों और समुदाय से मिलाया जा सकता है।

खास और स्थानीय कानून

- आंध्र प्रदेश देवदासी (समर्पण निषेध) अधिनियम, 1988 या कर्नाटक देवदासी (समर्पण निषेध) कानून, 1982.
- बंबई भिक्षावृत्ति रोकथाम कानून 1959
- बंधुआ मजदूरी प्रथा (उन्मूलन) कानून, 1976
- बाल मजदूरी रोकथाम एवं नियमन कानून, 1986
- बाल विवाह निषेध अधिनियम, 2006
- अभिभावकता एवं संरक्षण कानून, 1890
- हिंदू दत्तकता एवं भरण-पोषण कानून, 1956
- अनैतिक व्यापार (रोकथाम) कानून, 1986
- सूचना प्रौद्योगिक कानून, 2000
- मादक पदार्थ अवैध व्यापार निषेध कानून, 1988
- अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निषेध) कानून, 1989
- मानव अंग प्रत्यारोपण कानून, 1994

पंच क्या कर सकते हैं?

- बाल व्यापार की समस्या से निपटने के लिए सबसे पहले तो लोगों को जागरूक करना होगा। हम सभी को बाल व्यापार के खतरों और उससे बच्चों पर पड़ने वाले बुरे प्रभावों के बारे में जानकारियां इकट्ठा करके गांव के सभी लोगों को इस बारे में जागरूक बनाना चाहिए।
- गांव के नेता की हैसियत से पंचायत के सदस्यों को इस बात का खयाल रखना चाहिए कि उनकी पंचायत में गांव से जाने वाले सभी लोगों का ब्यौरा रखा जाए।
- बच्चों को बाल व्यापार के चंगुल से बचाने में जन्म पंजीकरण और विवाह पंजीकरण से काफी मदद मिल सकती है। सभी पंचायतों को इस तरह के रिकॉर्ड रखने चाहिए।
- अगर कोई बच्चा गायब होता है या किसी बच्चे का अपहरण हुआ है या आपको ऐसा लगता है कि किसी बच्चे को बेचा जा रहा है तो इस बारे में नजदीकी थाने में शिकायत जरूर दर्ज कराएं।
- अगर पंचायतें चौकसी रखें तो बच्चों की खरीद-फरोख्त रुक सकती है और ऐसा करने वालों की हिम्मत टूटेगी।
- कानूनी सलाह लें।
- मानव व्यापार के शिकार बच्चों के लिए एक सही और मददगार माहौल बनाएं ताकि उन्हें उनके परिवार और समुदाय के पास वापस भेजा जा सके। गांव में पंचायत का फैसला बहुत अहमियत रखता है। आप इस बात को ध्यान में रखते हुए ठोस कदम उठा सकते हैं और खरीदे-बेचे गए बच्चे को वापस उसके समुदाय में भिजवा सकते हैं। और हां, इसमें बच्चे की गलती न ढूंढें। अगर हम-आप इस तरह कोशिश करें तो बाकी लोग भी बच्चे की मदद जरूर करेंगे।

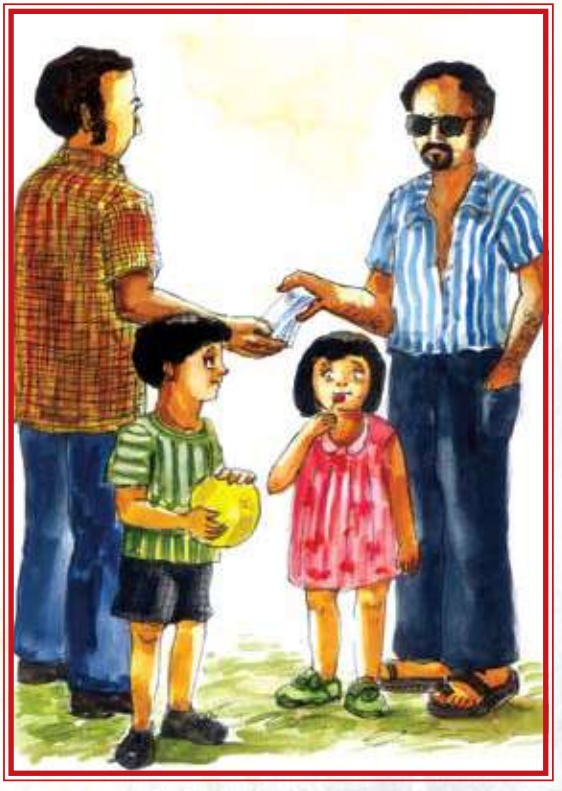

एचआईवी/एड्स

इस बारे में सटीक और मुकम्मल आंकड़ें तो मौजूद नहीं हैं लेकिन फिर भी इतना यकीन से कहा जा सकता है कि हमारे देश में एचआईवी/एड्स से संक्रमित या प्रभावित बच्चों की संख्या कई हजार तक जा चुकी है।

सड़कों पर रहने वाले बच्चे और बाल मजदूर यौन उत्पीड़न व शोषण के खतरे में ज्यादा रहते हैं। उनकी जिंदगी में यौन शोषण और नशीले पदार्थों के इस्तेमाल की गुंजाइश बहुत ज्यादा रहती है। उनके हालात ही ऐसे होते हैं। ऐसे बच्चों के पास न तो पारिवारिक सहायता होती है और न ही सामाजिक सुरक्षा व देखभाल का इंतजाम होता है। बाल वेश्यावृत्ति, बाल व्यापार और यौन शोषण के कारण जबर्दस्ती और मजबूरी में सेक्स की घटनाएं बढ़ जाती हैं जिससे बच्चों के सामने एचआईवी का खतरा बढ़ता है।

बच्चों में एचआईवी के पनपने का सबसे आम कारण होता है मां से बच्चे में होने वाला संक्रमण। इसके अलावा यौन शोषण, खून चढ़ाने और इस्तेमाल की जा चुकी सुइयों का इस्तेमाल करने से भी एचआईवी का वायरस फैल सकता है।

आज की तारीख में एचआईवी या एड्स का कोई इलाज नहीं है। एचआईवी की रोकथाम के लिए कोई टीका भी अभी तक नहीं बना है। लिहाजा, यह जानलेवा और लाइलाज बीमारी है।

एचआईवी/एड्स से संक्रमित या प्रभावित बच्चों के साथ भेदभाव

एचआईवी/एड्स से पीड़ित लोगों के साथ भेदभाव कोई नई बात नहीं है। उनके साथ लोग ऐसा बर्ताव करते हैं मानो वे बिरादरी से बाहर हों। एचआईवी/एड्स के साथ कलंक और बदनामी का अहसास भी इतना गहरा है कि एचआईवी/एड्स से संक्रमित या प्रभावित बच्चों के जिंदगी, विकास, सुरक्षा और मेलजोल के बुनियादी अधिकार भी छिन जाते हैं।

एचआईवी/एड्स संक्रमित मां-बाप के बच्चे कम उम्र में ही अनाथ और बेसहारा हो जाते हैं। मां-बाप की बेवक्त मौत से न केवल उनके सिर से मां-बाप का साया उठ जाता है बल्कि बाकी समाज भी उनसे कन्नी काटने लगता है। एचआईवी/एड्स से संक्रमित या प्रभावित बच्चे इस सामाजिक कलंक और भेदभाव से कभी आजाद नहीं रह पाते। जैसे ही मां-बाप एड्स के कारण बीमारी और फिर मौत के मुंह में चले जाते हैं, परिवार का बोझ बच्चों के नाजुक कंधों पर आ पड़ता है। आज हमारे देश में बहुत सारे ऐसे परिवार हैं जिनकी रोजी-रोटी बच्चे ही चला रहे हैं। इन बच्चों को मदद की जरूरत है। बच्चों – खासतौर से लड़कियों – को पैसे कमाने, खाने-पीने का इंतजाम करने और घर में बीमारों या भाई-बहनों की देखभाल करने के लिए जबर्दस्ती स्कूल से हटा लिया जाता

है। सूचनाओं की कमी, देखभाल और इलाज की कमी, या सलाह और पुनर्वास की कमी, सामाजिक सुरक्षा और अन्य सहायक सेवाओं की कमी के कारण ऐसे बच्चों की समस्या और बढ़ जाती है।

हमारे देश में ऐसे बहुत सारे उदाहरण हैं जहां एचआईवी/एड्स से संक्रमित या प्रभावित बच्चों को पढ़ाई-लिखाई का अधिकार भी नहीं दिया जाता है। समुदाय, यहां तक कि परिवार के सदस्य और रिश्तेदार भी संक्रमित या प्रभावित लोगों से सारे ताल्लुकात खत्म कर लेते हैं। ऐसी सूरत में एचआईवी/एड्स प्रभावित/संक्रमित व्यक्ति पूरी तरह अकेला पड़ जाता है और सारी उम्र अकेले संघर्ष करता है।

इस बीमारी के साथ जुड़ी बदनामी और भेदभाव के कारण संक्रमित लोग अपना इलाज कराने से भी कतराने लगते हैं। उन्हें डर रहता है कि अगर लोगों को पता चल गया तो वे मुसीबत में पड़ जाएंगे। इस बीमारी को फैलने से रोकने के लिए हमें ध्यान रखना चाहिए कि जो लोग पहले ही इस वायरस की चपेट में आ चुके हैं उन्हें पूरी देखभाल, इलाज और मदद मिलती रहे। हमें अपने आप से ही पूछना चाहिए कि क्या इस समस्या को अनदेखा करके उससे छुटकारा पाया जा सकता है या फिर हमें एक ऐसा माहौल बनाना चाहिए जिसमें इस तरह के सवालों पर सबके सामने बहस हो, लोग समस्या को समझें, जागरूक बनें और जिन्हें मदद की जरूरत है उन्हें मदद मांगने में हिचक न हो?

गलतफहमियां	*सच क्या है?*
एचआईवी और एड्स, दोनों एक ही चीजें हैं।	*जी नहीं, दोनों में फर्क है। एचआईवी एक वायरस है। इसका पूरा नाम है ह्यूमन इम्यूनो डेफिशिएंसी वायरस। एड्स इसी वायरस से पैदा होता है। जब कोई व्यक्ति एचआईवी से संक्रमित होता है तो यह वायरस उसके शरीर में दाखिल हो जाता है और खून की सफेद कोशिकाओं में पनपता रहता है। आमतौर पर यही कोशिकाएं हमें बीमारियों से बचाती हैं। जैसे-जैसे यह वायरस फैलता है, वह इन कोशिकाओं को या तो कमजोर कर देता है या मार देता है। इससे हमारी रोगों से लड़ने की ताकत कम हो जाती है और हम छोटी-मोटी बीमारियों की चपेट में आने लगते हैं। ऐसी सूरत में हमारा शरीर खांसी-जुकाम, निमोनिया से लेकर कैंसर तक किसी भी बीमारी का मुकाबला नहीं कर पाता।*

गलतफहमियां	सच क्या है ?
एचआईवी पॉजीटिव होने का मतलब है कि उस इंसान को एड्स हो चुका है	जी नहीं। एचआईवी पॉजीटिव सभी लोगों में फौरन एड्स पैदा नहीं होता। जब एचआईवी वायरस शरीर में दाखिल हो जाता है तो हमारे शरीर की रोग प्रतिरोधी प्रणाली उस वायरस पर हमला करती है और उसे कई साल तक काबू में रखती है। इस दौरान यह वायरस हमारी रोग प्रतिरोधी क्षमता से लगातार लड़ता रहता है। शरीर इस वायरस से छुटकारा पाने की पूरी कोशिश करता है लेकिन उसे खत्म नहीं कर पाता। हमारा शरीर इसे केवल नियंत्रित कर सकता है। कई साल बाद रोग प्रतिरोधी क्षमता एचआईवी के खिलाफ हारने लगती है। औसतन 10 साल तक एचआईवी से जूझने के बाद रोग प्रतिरोधी क्षमता कमजोर पड़ने लगती है। यही वह समय होता है जब एड्स पूरे तौर पर शुरू होता है। हो सकता है कि इन 10 सालों के दौरान संक्रमित व्यक्ति में एड्स के कोई लक्षण दिखाई न दें और वह बिल्कुल सामान्य जीवन जीता रहे। इस दौरान वह व्यक्ति केवल एचआईवी पॉजीटिव होता है। इस दौरान उसे एड्स का रोगी नहीं कहा जा सकता। दवाइयों के सहारे एचआईवी संक्रमित व्यक्ति को एड्स की अवस्था तक पहुंचने से रोका जा सकता है।
एड्स तो अफ्रीका की समस्या है। इस संकट के असर तो सिर्फ अफ्रीका के बच्चों पर ही पड़ रहे हैं।	जी नहीं, एड्स पूरी दुनिया की समस्या है। एड्स की खोज हुए 20 साल हो चुके हैं। अब यह महामारी दुनिया के हर कोने में पहुंच चुकी है। अभी तक इसकी सबसे बुरी मार अफ्रीका के लोगों पर ही पड़ी है लेकिन अब भयानक रफ्तार से यह चारों तरफ फैलता जा रहा है। जिन इलाकों के बारे में अब तक हमने सुना भी नहीं था वे भी एड्स की चपेट में आ रहे हैं। एशिया में एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों की सबसे बड़ी तादाद हमारे देश में है। हमसे भी ज्यादा आबादी वाला चीन दूसरे नंबर पर आता है। हकीकत यह है कि वैश्विक होती जा रही दुनिया में अब कोई देश एड्स से आजाद और सुरक्षित नहीं बचा है।
हमारे साथ ऐसा नहीं हो सकता। यह तो बुरे कर्मों का फल है।	एड्स की बेरहम दुनिया में "हम और वे" जैसी कोई चीज नहीं होती। एचआईवी/एड्स की बीमारी चमड़ी, रंग, जाति, वर्ग, मजहब, देश, अच्छे-बुरे कर्मों का फर्क नहीं मानती। कोई भी व्यक्ति एचआईवी से संक्रमित हो सकता है।

गलतफहमियां	सच क्या है ?
एचआईवी इन तरीकों से फैल सकता है... ■ पाखाने की सीट या दरवाजे की कुंडी को छूने से ■ संक्रमित व्यक्ति को छूने, गले लगाने, उसका हाथ पकड़ने या गाल पर चूमने से ■ एचआईवी संक्रमित व्यक्ति के साथ खाना खाने या एक दूसरे के बर्तनों का इस्तेमाल करने से ■ मच्छर के काटने से ■ एचआईवी पॉजीटिव व्यक्ति के व्यायाम के उपकरणों का इस्तेमाल करने या उसके साथ खेलने से	एचआईवी का वायरस एचआईवी पॉजीटिव व्यक्ति के शरीर से निकले संक्रमित द्रव्यों से फैल सकता है। अगर आप एचआईवी पॉजीटिव व्यक्ति के वीर्य से पहले निकलने वाले द्रव्य, योनि से निकलने वाले द्रव्यों, खून या दूध के संपर्क में आते हैं तो यह संक्रमण फैल सकता है। अगर एचआईवी-संक्रमित खून से दूषित सुई का इस्तेमाल किया जा रहा है, ऐसी सुई से दवाइयां चढ़ाई जाती हैं या शरीर पर गोदना किया जाता है या शरीर को छिदवाया जाता है तो भी उस सुई से यह वायरस दूसरे व्यक्ति के शरीर में जा सकता है।
बच्चे के साथ सेक्स में कोई खतरा नहीं है। इससे एचआईवी/एड्स की रोकथाम में मदद मिल सकती है	लड़के या लड़की, किसी भी नाबालिग के साथ सेक्स एक अपराध है। भारतीय दंड संहिता की धारा 376 और 377 के तहत इसे बलात्कार या अप्राकृतिक अपराध माना जाता है। बच्चों के साथ सेक्स से किसी का इलाज नहीं हो सकता। लेकिन हां, अगर कोई व्यक्ति किसी नाबालिग के साथ सेक्स करता है तो बच्चे में ही यौन संक्रामक बीमारियों के चले जाने की गुंजाइश ज्यादा रहती है। ऐसी सूरत में बच्चा एचआईवी वायरस की चपेट में भी आ सकता है।
सुरक्षित संभोग से एचआईवी नहीं फैलता	लिंग प्रवेश के बिना सेक्स करने या सेक्स के दौरान कॉन्डोम का इस्तेमाल करने से एचआईवी जैसी यौन संक्रामक बीमारियों की चपेट में आने या उनके फैलने का खतरा कम तो जरूर हो जाता है लेकिन पूरी तरह खत्म नहीं होता। बल्कि, अगर कोई व्यक्ति किसी पुरुष या महिला या बच्चे के साथ मुख मैथन करता है तो वह भी एचआईवी से संक्रमित हो सकता है। एचआईवी सहित किसी भी यौन संक्रामक बीमारी से बचने का सबसे अच्छा तरीका यही है कि हम यौन संयम के रास्ते पर चलें।

एचआईवी की जांच करवाने का भला क्या फायदा ?	*अगर आपको पता हो कि कोई व्यक्ति एचआईवी पॉजीटिव है तो इससे उसे समय पर इलाज करवाने में मदद मिलेगी। तब वह ज्यादा समय तक स्वस्थ रह सकता है और उसे औरों को संक्रमित करने से रोका जा सकता है।*

गलतफहमियां	*सच क्या है ?*
एड्स के कारण अनाथ या प्रभावित हुए बच्चों की जिंदगी में बदलाव के लिए उच्च तकनीक वाले महंगे साधनों की जरूरत होती है।	*वास्तविकता ये है कि समाधान तो बहुत जटिल या महंगे नहीं हैं लेकिन जरूरतमंद बच्चों की संख्या बहुत ज्यादा है और वह दिनोंदिन बढ़ती जा रही है। स्थानीय समुदायों, सरकारों और गैर-सरकारी संगठनों के साथ जुड़ कर हम ऐसे बच्चों की सहायता कर सकते हैं। हम उन्हें पढ़ाई जारी रखने और उपयोगी काम-धंधे सीखने में मदद दे सकते हैं। हम यह सुनिश्चित कर सकते हैं कि उन्हें सुरक्षा, भोजन और इलाज मिले, वे अपने मां-बाप की मौत से पैदा हुए सदमे और दुख का सामना कर पाएं।*
एड्स की रोकथाम और उपचार के लिए चलाए जा रहे कार्यक्रम बहुत खर्चीले हैं	*ये कार्यक्रम महंगे तो हैं लेकिन हाथ पर हाथ धरे बैठे रहने के मुकाबले यह लागत कुछ भी नहीं है। पिछले सालों के दौरान इन कार्यक्रमों की लागत में काफी कमी आई है और आने वाले सालों में यह और भी कम हो जाएगी।*

निम्नलिखित पर आधारित :

- **लुई फ्रेशेते, दि यूएन ऐण्ड दि ग्लोबल फाइट अगेंस्ट एचआईवी/एड्सः मिथ ऐण्ड रियलिटी,**

  http://cceia.org/viewMedia.php/prmTemplateID/8/prmID/115

- **एचआईवी/एड्स : मिथ्स वर्सेज़ रियलिटी, बारूक हेल्थ नेटवर्क,**

  http://www.scsu.baruch.cuny.edu/scsu/health/hiv/hivmyths.html

- **मिथ्स ऐण्ड रियलिटीज़ एबाउट चिल्ड्रेन ऐण्ड एचआईवी/एड्स, सेव दि चिल्ड्रन यूएसए,**

  http://www.savethechildren.org/health/hiv_aids/top_five.asp

कानून क्या कहता है?

भारत सरकार ने एचआईवी/एड्स की रोकथाम के लिए कुछ नीतियां बनाई हैं। नैशनल एड्स कंट्रोल अथॉरिटी (नाको) ने एचआईवी/एड्स के बारे में जो नीति बनाई है उसमें समस्या की रोकथाम और इलाज, दोनों बातों का खयाल रखा गया है। यह नीति निष्पक्षता, अपनी मर्जी से जांच, सोच-समझ कर दी गई रजामंदी और पहचान उजागर न करने के सिद्धांत पर आधारित है।

अब तो सरकार ने ये आदेश भी दे दिया है कि खून चढ़ाने के लिए जो भी खून लिया जाएगा उसकी जांच की जाएगी और ये पता लगाया जाएगा कि उसमें एचआईवी का वायरस तो नहीं है।

अब एचआईवी पॉजीटिव लोगों के अधिकारों की रक्षा के लिए भी कानून बनाने की तैयारी की जा रही है। लेकिन, इस कानून के बिना भी हमारे संविधान में सभी नागरिकों को कुछ मौलिक अधिकार दिए गए हैं जो एचआईवी पॉजीटिव लोगों पर भी बराबर लागू होते हैं। ये अधिकार इस प्रकार हैं:

- सोच-समझ कर रजामंदी देने का अधिकार
- गोपनीयता का अधिकार
- भेदभाव से बचाव का अधिकार

सोच–समझ कर सहमति देने का अधिकार

किसी से भी उसकी मर्जी से ही रजामंदी ली जानी चाहिए। अगर आप जोर–जबर्दस्ती, भूल, जालसाजी, नाजायज़ दबाव या झूठ बोलकर किसी की रजामंदी ले लेते हैं तो यह गलत है।

सहमति सोच–समझकर दी गई हो। डॉक्टर–मरीज़ के संबंधों में यह बात बहुत महत्वपूर्ण हो जाती है। डॉक्टर ज्यादा जानता है और मरीज उस पर भरोसा करता है। लिहाजा, किसी भी डॉक्टरी कार्रवाई से पहले डॉक्टर को चाहिए कि वह मरीज को सारे खतरों और परेशानियों के बारे में बता दे। उसे ये भी बताना चाहिए कि मरीज के सामने और कौन–कौन से रास्ते मौजूद हैं ताकि मरीज सोच–समझ कर फैसला ले सके कि उसे कौन सा रास्ता अपनाना है।

दूसरी बहुत सारी बीमारियों के मुकाबले एचआईवी के नतीजे बहुत अलग तरह के होते हैं। यही वजह है कि एचआईवी की जांच के लिए संबंधित व्यक्ति की रजामंदी लेने के लिए उसे हर पहलू पर सोच–विचार का पूरा मौका और समय मिलना चाहिए। एक और बात। अगर एक व्यक्ति ने किसी एक डॉक्टरी जांच के लिए हां कर दी है तो इसका ये मतलब नहीं है कि अब उससे एचआईवी की जांच के लिए पूछने की जरूरत नहीं है। अगर उसने सोच–समझ कर सहमति नहीं दी है तो इसका मतलब यह है कि उसके अधिकारों का उल्लंघन किया जा रहा है। ऐसी सूरत में वह अदालत से मदद मांग सकता है।

गोपनीयता का अधिकार

जब हम किसी पर भरोसा करते हैं और उसे अपनी कोई अंदरूनी बात बताते हैं तो वह गोपनीय या राज़ की बात होती है। जिस आदमी को यह जानकारी दी गई है अगर वह उसे औरों को बता देता है तो यह राज़दारी और भरोसे को तोड़ता है।

डॉक्टर की जवाबदेही अपने मरीज के प्रति होती है। उसे अपने मरीज से मिली जानकारियों को उजागर नहीं करना चाहिए। उसे सारी अहम बातों को छिपा कर रखना चाहिए। अगर फिर भी किसी व्यक्ति की गोपनीयता भंग हुई है, यानी उससे जुड़ी महत्वपूर्ण जानकारियों को उजागर कर दिया गया है या इस बात का खतरा दिखाई दे रहा है तो वह व्यक्ति अदालत में जाकर इस नुकसान के लिए हर्जाना मांग सकता है।

एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोग अदालत में भी जाने से कतराते हैं। उन्हें लगता है कि अगर वे अदालत में गए तो उनकी एचआईवी संक्रमण की बात सबको पता चल जाएगी। लेकिन इस बात से डरने की जरूरत नहीं है। वे अदालत में जाने के लिए 'अपनी पहचान गुप्त रखने' की शर्त का सहारा ले सकते हैं। इस प्रावधान के सहारे मरीज को अपने असली नाम से मुकदमा दायर करने की जरूरत नहीं होती। वह किसी नकली नाम से मुकदमा दायर कर सकता है। इस तरह, एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोग भी सामाजिक बहिष्कार या भेदभाव की चिंता किए बिना इंसाफ के लिए आवाज उठा सकते हैं।

भेदभाव से मुक्ति का अधिकार

समान उपचार का अधिकार एक मौलिक अधिकार है। कानून ये कहता है कि कोई भी सरकारी या गैर-सरकारी महकमा किसी भी सामाजिक या पेशेवर मामले में लिंग, धर्म, जाति, नस्ल, वंश या जन्म स्थान के आधार पर किसी के साथ भी भेदभाव नहीं कर सकता।

सरकारी स्वास्थ्य सुविधाओं का अधिकार एक मौलिक अधिकार है। यह ऐसा अधिकार है जो संविधान से सभी लोगों को मिला हुआ है। इसका मतलब ये है कि अगर एचआईवी पॉजीटिव लोग इलाज कराना चाहते हैं या किसी अस्पताल में दाखिल होना चाहते हैं तो उन्हें मना नहीं किया जा सकता। और अगर उनका इलाज नहीं किया जाता है तो वे अदालत में जाकर दोषियों के खिलाफ कार्रवाई कर सकते हैं।

एचआईवी पॉजीटिव होने के कारण नौकरी-चाकरी के मामले में भी किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता। अगर इसी कारण किसी व्यक्ति को नौकरी से निकाल दिया जाता है तो वह अदालत में जाकर मदद मांग सकता है।

मई 1997 में बंबई उच्च न्यायालय ने फैसला दिया था कि अगर कोई व्यक्ति एचआईवी पॉजीटिव है लेकिन वह औरों की तरह स्वाभाविक रूप से काम कर सकता है और किसी के लिए कोई खतरा पैदा नहीं करता है तो उसे नौकरी से नहीं निकाला जा सकता।

1992 में भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने सभी राज्य सरकारों को निर्देश दिया था कि सभी केंद्रीय और प्रांतीय सरकारी स्वास्थ्य संस्थाओं में एचआईवी/एड्स ग्रस्त लोगों को बिना भेदभाव के इलाज की सुविधा मुहैया कराएं।

स्रोत : लीगल इश्यूज इन एचआईवी/एड्स, http://www.indianngos.com/issue/hiv/legal/index.htm

पंचायत के लोग क्या कर सकते हैं?

इस मामले में हर व्यक्ति कुछ न कुछ भूमिका निभा सकता है। स्थानीय और राष्ट्रीय सरकार, समुदाय, कारोबारी लोग, विश्वविद्यालय, फाउंडेशन, संस्थाएं, हमारे-आपके जैसे लोग—सभी कुछ न कुछ भूमिका अदा कर सकते हैं।

इस मामले में भी सबसे पहले तो यही जरूरी है कि हम एचआईवी/एड्स की समस्या को समझें और उससे लड़ने का संकल्प लें। हमारे यहां पंचायत ही शासन की सबसे निचली इकाई है। इस प्रकार, पंचायत ही जनता के सबसे नजदीक होती है। लिहाजा, जनता के प्रतिनिधि की हैसियत से हर पंच और सरपंच राजनीतिक इच्छाशक्ति पैदा करने में अपना योगदान दे सकता है।

एचआईवी पॉजीटिव व्यक्तियों या उससे प्रभावित लोगों के साथ भेदभाव करने से समस्या का हल निकलने वाला नहीं है। इससे तो समस्या और फैल जाएगी। इसलिए, हम सबको फौरन कदम उठाना चाहिए!

पंचायत के सदस्य अपने इलाके में एचआईवी/एड्स से जुड़ी गलतफहमियों को दूर करने और लोगों को वास्तविकता से वाकिफ कराने के लिए कार्यक्रम तैयार कर सकते हैं। आप समुदाय के मुखिया हैं। आप जागरूकता फैलाने, लोगों को जानकारी देने, सामुदायिक स्तर

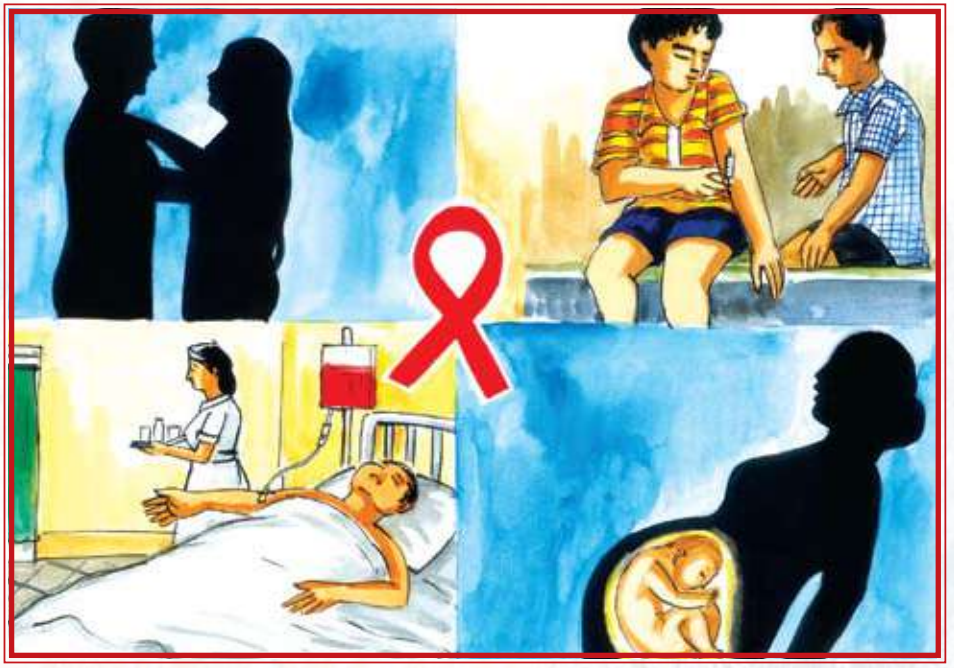

पर कार्रवाई करने और लोगों के मानवाधिकारों की रक्षा के लिए सही माहौल बना सकते हैं। एचआईवी/एड्स की रोकथाम में आप पर बहुत बड़ा दारोमदार है। यह सच है कि जैसे ही हम रोकथाम की बात करने लगते हैं तो कई नाजुक मुद्दों को छेड़ देते हैं, भीतरी चीजों की चर्चा करने लगते हैं। हम जिंदगी के उन पहलुओं को उंघाड़ देते हैं जिनके बारे में बहुत सारे लोग खुलकर बात भी नहीं करना चाहते। लेकिन फिर भी कोशिश तो करनी ही पड़ेगी। ब्राजील और थाईलैंड में इसी तरह के रोकथाम अभियान काफी कारगर रहे हैं। इन देशों में एचआईवी/एड्स की रोकथाम के लिए वहीं के लोगों ने कार्यक्रम तैयार किए थे इसलिए उन्हें लागू करना बहुत मुश्किल साबित नहीं हुआ। यानी, अभियान चलाने वाले इस बात से वाकिफ थे कि उनके देश या समाज में किस तरह की संस्कृति है और लोगों से किस तरह बात की जा सकती है। क्या हम भारत में ऐसा नहीं कर सकते?

चाहे कोई एचआईवी पॉजीटिव हो या न हो, हर व्यक्ति को ये जरूर बताया जाना चाहिए कि वह एचआईवी या दूसरी यौन संक्रामक बीमारियों से अपना बचाव किस तरह कर सकता है। इसके लिए स्वैच्छिक काउंसलिंग एवं जांच केंद्रों में सलाह दी जाती है। अगर गांव में एक भी एचआईवी पॉजीटिव व्यक्ति नहीं है तो भी अपने गांव में स्वैच्छिक काउंसलिंग और जांच केंद्र (वीसीटीसी) खुलवाएं और इन केंद्रों में मिलने वाली काउंसलिंग के जरिए जागरूकता फैलाएं।

अफ्रीका में एड्स के कारण अनाथ हुए बच्चे अपने गांव में अपने परिवार वालों और रिश्तेदारों के साथ ही रहते हैं। परिवार के लोग इन बच्चों की हर तरह से देखभाल करते हैं। इसी तरह हमारी पंचायतें भी ऐसी परेशानी में फंसे बच्चों को समुदाय के स्तर पर राहत और पुनर्वास दे सकती हैं। अगर कोई बच्चा एचआईवी/एड्स से प्रभावित है तो भी पंचायत उसे हर तरह की मदद दे सकती है।

सभी ग्राम शिक्षा समितियों को अपने तहत आने वाले स्कूलों को ये निर्देश देना चाहिए कि वे एचआईवी/एड्स से प्रभावित या संक्रमित बच्चों के साथ भेदभाव न करें। स्कूलों में इस विषय पर जागरूकता कार्यक्रम भी चलाने चाहिए। गांव के नेता होने के नाते पंच इस बारे में राय तैयार कर सकते हैं और अपने साथियों को प्रेरित कर सकते हैं ताकि ग्राम शिक्षा समिति में एचआईवी/एड्स पर चर्चा की जा सके।

शारीरिक सज़ा

ज्यादातर लोग सोचते हैं कि अगर बच्चों के साथ डंडे से बात न की जाए तो बच्चे बिगड़ जाते हैं।

जो लोग अपने मां-बाप और मास्टरों की मार-पीट झेलते हुए बड़े हुए हैं उन्हें यही तरीका ठीक लगता है। वे इस बात को भूल जाते हैं कि जब वे छोटे थे और उन्हें जिस्मानी या अपमानजनक सज़ा दी जाती थी तो उनके दिलो-दिमाग पर क्या बीतती थी।

जब बच्चे को सुधारने की बजाय दर्द पहुंचाने या चोट पहुंचाने के इरादे से मारपीट की जाती है तो उसे शारीरिक दंड कहा जाता है।

बच्चों को अनुशासन में रखने के लिए अकसर उनके साथ मारपीट की जाती है। मां-बाप, अध्यापकों और स्कूली कर्मचारियों के सामने बच्चे की स्थिति बहुत कमजोर होती है। तकरीबन सभी स्कूलों में किसी न किसी वजह से बच्चों को शारीरिक सज़ा दी जाती है। ज्यादतर मां-बाप भी अपने बच्चों को किसी न किसी वजह से पीटते ही हैं।

अनुशासन के नाम पर होने वाले इस अत्याचार से बच्चों की हड्डियां और दांत तक टूट जाते हैं। उनके बाल खींचे जाते हैं और उन्हें बेइज्जत किया जाता है। मारपीट का तरीका बच्चों को अनुशासित करने का सबसे बेअसर तरीका है। मारपीट कर बच्चे को किसी काम के लिए प्रेरित नहीं किया जा सकता। इस तरह तो उसे केवल मजबूर किया जा सकता है। इससे बच्चे को फायदे की बजाय नुकसान ज्यादा होता है।

शारीरिक दंड से बच्चे को क्या नुकसान पहुंचता है?

मारपीट से बच्चे के कोमल दिमाग पर बहुत बुरा असर पड़ता है। इस तरह की सजा पाने वाले बच्चे के दिमाग में नफरत, दहशत और डर बैठ जाता है।

इस तरह की सजा के कारण बच्चे में गुस्सा, असंतोष और आत्मविश्वास की कमी पैदा हो जाती है। पिटा हुआ बच्चा चारों तरफ से बेसहारा और अपमानित महसूस करता है। उसके स्वाभिमान और आत्मसम्मान को ठेस पहुंचती है। वह औरों से कट कर रहने लगता है या आक्रामक हो जाता है। इतना ही नहीं, इस तरह हम किसी भी समस्या का हल निकालने के लिए बच्चों को हिंसा करने और बदला लेने का तरीका सिखा देते हैं।

बड़े जो कुछ करते हैं, बच्चे भी उसकी नकल करने लगते हैं। बच्चे भी यही मानने लगते हैं कि हिंसा का इस्तेमाल करने में कोई हर्जा नहीं है। कई बार तो बच्चे बदला लेने के लिए अपने मां-बाप या अध्यापकों के साथ मारपीट पर भी उतारू हो जाते हैं। जिन बच्चों ने बचपन में मारपीट झेली है वे बड़े होकर अपने साथियों, पति/पत्नी या दोस्तों से भी मारपीट करने लगते हैं।

मारपीट की वजह से बच्चा अपने अध्यापकों और मां-बाप पर भरोसा खो देता है।

स्रोत : प्रोफेसर मादाभुशी श्रीधर, एलएलएम, एमसीजे, पीएचडी द्वारा लिखित 'कॉरपोरल पनिशमेंट : वायलेशन ऑफ चाइल्ड राइट्स इन स्कूल्स', नलसार यूनिवर्सिटी ऑफ लॉ, हैदराबाद पर आधारित। और जानकारियों के लिए www.Legal Service India.com पर जाएं।

गलतफहमियां	*सच क्या है?*
बच्चों को अनुशासित करने के लिए कभी-कभी पीटना जरूरी हो जाता है।	*जी नहीं। मारपीट के सहारे अनुशासन कभी नहीं सिखाया जा सकता। अनुशासन तो बच्चे खुद सीखते हैं। अनुशासन एक तरह के रवैये, चरित्र, जिम्मेदारी या प्रतिबद्धता की बात होती है। अनुशासन भीतर से पैदा होता है। इसके लिए बच्चे का दिल जीतना पड़ता है। बाहर से अनुशासन थोपने की कोशिश से कोई फायदा नहीं होता।*
अपने बच्चों को अनुशासित करने का मां-बाप और अध्यापकों को पूरा अधिकार होता है	*बच्चों को अनुशासित करने के नाम पर उनके विकास में रुकावट डालना और उनकी हिस्सेदारी का अधिकार छीन लेना कहां की समझदारी है। बल्कि अगर बच्चों को हिस्सेदारी का अधिकार दिया जाए तो उनमें खुद-ब-खुद अनुशासन पैदा हो जाता है।* *कोई धर्म या कानून भी मारपीट को सही नहीं मानता। अगर हम अपने बच्चों को नियंत्रित नहीं कर पा रहे हैं तो भी हमें बच्चों को मारपीट कर सजा देने का कानूनी या नैतिक अधिकार नहीं है।*
कभी-कभी मारपीट सही रहती है। इससे फायदा होता है।	*जी नहीं। मारपीट करके बच्चे की गलत हरकतों को कुछ हद तक रोका तो जा सकता है लेकिन इससे न तो उसकी समझदारी में सुधार आता है और न ही वह ज्यादा बुद्धिमान बन जाता है।* *बल्कि इससे तो न जाने कितने बुरे असर बच्चे पर पड़ते हैं। सड़कों पर रहने वाले और कामकाजी बच्चों में से बहुत सारों का कहना है कि स्कूल में होने वाली मारपीट से तंग आकर ही उन्होंने स्कूल और अपना घर-बार छोड़ दिया था।*

कानून क्या कहता है?

ऐसा कोई कानून नहीं जो मां-बाप या अध्यापकों को बच्चों के साथ मारपीट करने से रोकता हो। लेकिन कुछ राज्यों ने अपने स्कूलों में मारपीट पर पाबंदी लगा दी है।

सरकार बाल दुराचार के बारे में एक कानून तैयार कर रही है जिसमें मारपीट को भी बच्चों के खिलाफ एक अपराध का दर्जा दिया जाएगा। लेकिन, जब तक ऐसा कोई कानून नहीं बनता तब तक हमारे पास जो भी साधन हैं, उन्हीं के सहारे काम चलाना पड़ेगा।

वयस्कों को समझना चाहिए कि बच्चों को भी आजादी, गोपनीयता और प्रतिष्ठा का अधिकार होता है। मारपीट तो बच्चे के विकास और हिस्सेदारी के अधिकार को ही तोड़ती है।

अब हमें – 'डंडा छोड़ो, बचपन बचाओ' – के इस नए उसूल पर चलना होगा।

ऐसे राज्य जहां मारपीट पर पाबंदी लगाई है या उसे सही ठहराया गया है।

राज्य	मारपीट (प्रतिबंधित या स्वीकृत)	कानून/नीति
तमिलनाडु	प्रतिबंधित	जून 2003 में तमिलनाडु शिक्षा नियमावली के नियम 51 में बदलाव करके तमिलनाडु में शारीरिक सजा पर पाबंदी लगा दी गई है। इस कानून में कहा गया है कि बच्चों को "सुधारने" के लिए किसी भी बच्चे को मानसिक या शारीरिक कष्ट नहीं पहुंचाया जा सकता।
गोवा	प्रतिबंधित	गोवा के गोवा बाल कानून, 2003 में शारीरिक सजा पर पाबंदी लगा दी गई है।
प. बंगाल	प्रतिबंधित	फरवरी 2004 में कलकत्ता उच्च न्यायालय ने आदेश दिया कि पश्चिम बंगाल के स्कूलों में डंडे/छड़ी से बच्चों की पिटाई गैरकानूनी है। कलकत्ता उच्च न्यायालय में तपस भानजा (एडवोकेट) ने भी एक जनहित याचिका (पीआईएल) दायर की हुई है।
आंध्रप्रदेश (हैदराबाद)	प्रतिबंधित	स्कूल शिक्षा सचिव आई वी सुब्बाराव ने 18 फरवरी 2002 को एक सरकारी आदेश (जीओएमएस संख्या 16) जारी किया। इस आदेश के जरिए 1966 के सरकारी आदेश संख्या 1188 में शारीरिक सजा के बारे में दिए गए नियमों को बदल दिया गया है। 2002 के नए आदेश के हिसाब से आंध्र प्रदेश सरकार ने सभी शिक्षा संस्थानों में मारपीट पर पाबंदी लगा दी है। इसके लिए राज्य सरकार ने शिक्षा नियमावली (1966) के नियम 122 में संशोधन किया है। अगर कोई व्यक्ति इस पाबंदी को तोड़ता है तो उस पर अदालत में कार्रवाई की जाएगी।
दिल्ली	प्रतिबंधित	दिल्ली में पेरेंट्स फोरम फॉर मीनिंगफुल एजुकेशन (सार्थक शिक्षा अभिभावक मंच) ने अदालत में एक याचिका दायर की थी। इससे पहले दिल्ली स्कूल शिक्षा कानून (1973) में यह प्रावधान किया गया था कि बच्चों को सजा के तौर पर मारा-पीटा जा सकता है। अब दिल्ली उच्च न्यायालय ने इस प्रावधान को रद्द कर दिया है। दिसंबर 2000 में दिल्ली उच्च न्यायालय ने व्यवस्था दी कि दिल्ली स्कूल शिक्षा कानून (1973) में शारीरिक मारपीट का जो प्रावधान किया गया था वह बच्चों के लिए अमानवीय और नुकसानदेह था।
चंडीगढ़	प्रतिबंधित	चंडीगढ़ में 1990 के दशक में ही शारीरिक मारपीट पर पाबंदी लगा दी गई थी।
हिमाचल प्रदेश	पाबंदी का फैसला ले लिया गया है	हिमाचल प्रदेश के एक स्कूल में मारपीट के कारण एक बच्चा विकलांग हो गया था। इस घटना के बाद राज्य सरकार ने स्कूलों में बच्चों के साथ मारपीट पर पाबंदी लगा दी है।

पंचायत सदस्य क्या कर सकते हैं

- सबसे पहले तो हम सबको ही अपने घरों में बच्चों के साथ मारपीट पर पाबंदी लगा कर औरों के लिए एक मिसाल कायम करनी चाहिए।
- अपने दूसरे साथियों को भी इस बात के लिए तैयार करें कि वे स्कूल और घर, दोनों जगह बच्चों के साथ मारपीट को रोकें।
- इन मुद्दों को ग्राम शिक्षा समिति की बैठकों में उठाना चाहिए। कल्पना कीजिए कि अगर ग्राम शिक्षा समिति आपके गांव में स्कूलों के भीतर बच्चों के साथ मारपीट पर पाबंदी लगा दे तो यह कितनी बड़ी तारीफ की बात होगी!
- अगर आपको किसी स्कूल या अपने गांव में ऐसी घटना का पता चलता है तो उसे ग्राम शिक्षा समिति या जिले के शिक्षा विभाग की जानकारी में लाएं।

- अगर आपको लगता है कि किसी बच्चे के साथ जातीय भेदभाव के कारण मारपीट की जा रही है तो उसकी जानकारी पुलिस को दें।

जातीय भेदभाव

हमारे देश में छुआछूत आज भी जारी है। हमारे भोले-भाले बच्चे इस बारे में कुछ नहीं जानते पर फिर भी वे इस भेदभाव को झेलते हैं!

चाहे स्कूल हो या खेल का मैदान, बहुत सारे बच्चे हैं जिन्हें छुआछूत का सामना करना पड़ता है। यह कितनी हैरानी और विडंबना की बात है कि आधुनिकीकरण और तरक्की के रास्ते पर चलते हुए भी हम अपने बच्चों को छुआछूत का पाठ पढ़ा रहे हैं।

हम अकसर ये दलील देते हैं कि सामाजिक ऊँच-नीच की व्यवस्था हमने नहीं बनाई थी। यह तो पहले से ही ऐसी थी। लेकिन हम यह क्यों भूल जाते हैं कि ऊँच-नीच के ये फासले कुछ लोगों को दबाए रखने के लिए ही बने हैं। लिहाजा, अगर हम चाहें तो इन्हें बदल भी सकते हैं।

गलतफहमियां	*सच क्या है?*
आज के आधुनिक और वैश्विक भारतीय समाज में जातीय भेदभाव कहां होता है!	*जी नहीं, यह भेदभाव अभी भी मौजूद है। ऐसे आंकड़ों और सबूतों की कोई कमी नहीं है जिनसे साबित होता है कि समाज के कुछ तबकों के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक अधिकारों का जम कर उल्लंघन किया जा रहा है। खासतौर से शिक्षा, इलाज, सामाजिक सुरक्षा, बाल मजदूरों के लिए चलने वाले कार्यक्रमों में और कर्ज बंधुआ मजदूरों व हाथ से टट्टी-पेशाब उठाने वालों के साथ यह भेदभाव खूब दिखाई देता है।* *अभी भी एक जाति का लड़का या लड़की दूसरी जाति में शादी कर ले तो हंगामा हो जाता है। जो नौजवान ऐसा करते हैं उन्हें बेहिसाब मारपीट और मुसीबतों का सामना करना पड़ता है।* *दलितों के हकों की रक्षा के लिए बनाए गए सरकारी संस्थान भी अपना काम ठीक से नहीं कर रहे हैं।* *सामाजिक न्याय के लिए बनाए गए कानूनों को लोग धड़ल्ले से तोड़ रहे हैं।*
बच्चों को तो सब प्यार करते हैं। उनके साथ कोई भेदभाव नहीं करता।	*जी नहीं, हमेशा ऐसा नहीं होता। जातीय भेदभाव से सबसे पहला आमना-सामना तो बचपन में ही हो जाता है। हमारे बच्चे स्कूल में, खेल के मैदान में, अस्पतालों में और तमाम दूसरे स्थानों पर इस भेदभाव का सामना करने लगते हैं।*
बार-बार जातीय भेदभाव का जिक्र करके हम इस समस्या को और मजबूत करते जा रहे हैं।	*मामला इतना आसान नहीं है। छुआछूत की समस्या इतनी गहरी है कि आप चाहे जो कहिए और कीजिए, यह खत्म नहीं होती।*

कानून क्या कहता है?

भारत का संविधान

धारा 14 - इस कानून में कहा गया है कि देश का हर व्यक्ति कानून की नजर में बराबर है और सभी को कानून की हिफाजत मिलनी चाहिए।

धारा 15 - इस कानून के अनुसार नस्ल, जाति, लिंग, कुनबे, जन्म स्थान या निवास स्थान के आधार पर किसी के साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता।

धारा 16 - इस धारा में किसी भी सरकारी नौकरी के लिए नस्ल, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव को गैरकानूनी बताया गया है।

धारा 17 - इस धारा में 'छुआछूत' पर पांबदी लगाई है और इस बात का इंतजाम किया है कि अगर कोई व्यक्ति या संस्थान किसी भी तरह से छुआछूत फैलाता है तो उसे सजा दी जाएगी।

'छुआछूत' को मानने और उसकी हिमायत करने वालों को सजा देने के लिए सबसे पहले 'नागरिक अधिकार सुरक्षा कानून, 1955' बनाया गया था। इस कानून में किसी अनुसूचित जाति के व्यक्ति को उसकी जाति के नाम से पुकारना भी अपराध है जिसके लिए सजा दी जा सकती है। लिहाजा अगर कोई व्यक्ति 'चमार' जाति के व्यक्ति को 'चमार' कहकर पुकारता है तो वह गलत करता है।

1989 में भारत सरकार ने 'अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार रोकथाम) कानून' बनाया था। इस कानून में प्रावधान किया गया है कि अगर कोई व्यक्ति अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लोगों के साथ किसी भी तरह की हिंसा या भेदभाव करता है तो उसे सजा दी जाएगी। इस तरह के अपराधों की सुनवाई के लिए जिला स्तर पर विशेष अदालतें बनाई गई हैं। इन अदालतों में विशेष सरकारी वकीलों को तैनात किया गया है और सरकार की तरफ से साझा जुर्माने की व्यवस्था की गई है।

पंच क्या कर सकते हैं?

इस बात पर तो किसी का ऐतराज नहीं हो सकता कि किसी के बारे में जातीय पूर्वाग्रह रखना अच्छी बात नहीं होती। इस लिहाज से पंचायतें सामाजिक बदलाव लाने में बड़ी अहम भूमिका निभा सकती हैं। पंचायतों के जरिए इन सवालों पर जागरूकता अभियान चलाए जा सकते हैं।

पंचायतें इस बात का भी खयाल रख सकती हैं कि छुआछूत और जातीय भेदभाव पर पाबंदी लगाने वाले कानूनों को असरदार ढंग से लागू किया जाए। अगर कोई पंचायत तय कर ले कि हमें अपनी एक साफ छवि बनानी है तो उसे आगे बढ़ने से कोई नहीं रोक सकता।

संविधान में किए गए 73वें संशोधन के जरिए पूरे देश में पंचायती राज व्यवस्था को कानूनी जामा पहना दिया गया है। अब हर गांव पंचायत में अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को भी लाजिमी तौर पर चुनने की व्यवस्था कर दी गई है। पंचायतों में सीटों के आरक्षण से पहले इन तबकों से पंचायतों में बहुत कम लोग ही चुन कर आ पाते थे। अब पंचायतों में उनकी संख्या तो बढ़ गई है लेकिन हकीकत में बहुत कुछ नहीं बदला है। अनुसूचित जाति के प्रतिनिधि अभी भी उसी इलाके से जीतते हैं जिस इलाके में उनके समुदाय के लोग ज्यादा होते हैं। सही मायनों में तो बदलाव तभी आ सकता है जब अनुसूचित जाति के उम्मीदवार ऐसे चुनाव क्षेत्रों से भी जीतने लगें जहां अनुसूचित जाति के लोग नहीं हैं या बहुत कम हैं। लेकिन ये तो तभी हो सकता है जब हम आपस में मिल-जुल कर रहें और एक दूसरे का दर्द समझते हों।

सड़क पर रहने वाले और घर से भागे हुए बच्चे

शहरों और छोटे-मोटे कस्बों में, रेलवे स्टेशनों पर, बस अड्डों के इर्द-गिर्द, फुटपाथों और अन्य सार्वजनिक स्थानों पर बहुत सारे बच्चे निरुद्देश्य भटकते मिल जाते हैं। बहुत सारे बच्चे कूड़ा बीनते हैं या छोटी-मोटी चीजें बेच रहे होते हैं। ज्यादातर लोगों के लिए यह एक आम नजारा है लेकिन उन बच्चों में से हरेक के पास एक ऐसी कहानी है जो कइयों के रोंगटे खड़ी कर देगी। उन सबकी जिंदगी में शोषण का एक कभी न खत्म होने वाला सिलसिला दिखाई देता है। उनमें से कुछ बच्चे अपने मां-बाप/अभिभावकों के साथ भी रहते हैं लेकिन दिल्ली जैसे बड़े शहरों में ऐसे ज्यादातर बच्चे अपने बूते पर ही जिंदगी बसर करते हैं।

घर से भागने के पीछे बच्चों के पास अपने-अपने कारण होते हैं। मसलनः

- *जिंदगी में बेहतर मौकों की तलाश*
- *बड़े शहरों का आकर्षण*
- *यार-दोस्तों का दबाव*
- *परिवार में तनाव*
- *मां-बाप द्वारा छोड़ दिया जाना*
- *मां-बाप या शिक्षकों के हाथों पिटाई का डर*
- *यौन शोषण*
- *जातीय भेदभाव*
- *लैंगिक भेदभाव*
- *विकलांगता*
- *एचआईवी/एड्स के कारण भेदभाव आदि।*

सड़कों पर रहने वाले बच्चों में से बहुत सारे घर से भाग कर आए होते हैं। वे या तो बेहतर मौकों की तलाश में, या बड़े शहरों की चकाचौंध से खिंच कर या यार-दोस्तों के दबाव में घर से निकल पड़ते हैं और शहरों में जा पहुंचते हैं जहां उनकी जिंदगी और भयानक हो जाती है। ऐसे बहुत सारे बच्चे गांव-देहात से आए होते हैं इसलिए उनमें से कोई बच्चा हमारे-आपके गांव का भी हो सकता है।

इन बच्चों की हालत इतनी खराब रहती है कि वे दो वक्त की रोटी का जुगाड़ भी आसानी से नहीं कर पाते। ऊपर से तरह-तरह के शोषण और दुराचार का खतरा भी उन पर हमेशा मंडराता रहता है। एक बार सड़क पर आ जाने के बाद वे अंतहीन शोषण और अनगिनत समस्याओं के चक्रव्यूह में फंस जाते हैं। अपने से ज्यादा उम्र के बच्चों के संपर्क में आने के बाद ऐसे नए और कम उम्र बच्चे या तो यहां-वहां कूड़ा बीनने लगते हैं या कोई और काम-धंधा शुरू कर देते हैं। कुछ बच्चे जेब काटने, भीख मांगने, नशीली दवाओं के व्यापार आदि में फंस जाते हैं।

गलतफहमियां	*सच क्या है ?*
आपको सड़कों पर रहने वाले बच्चों से क्या मतलब। आप उनकी जिंदगी में दखल नहीं दे सकते।	*सड़कों पर रहने वाले ज्यादातर बच्चे गांवों से आए होते हैं। अगर हम अपने गांव के बच्चों की समस्याओं पर ध्यान देने लगें तो बहुत सारे बच्चों को घर से भागने या सड़कों पर जिंदगी बसर करने से रोक सकते हैं।*
सड़कों पर रहने वाले बच्चे खराब होते हैं।	*जी नहीं, हमेशा ऐसा नहीं होता। ऐसे सब बच्चे खराब नहीं होते। खराब तो वह स्थिति है जिसमें वे फंस जाते हैं।*
गरीब घरों के बच्चे ही घर से भागते हैं।	*ये धारणा भी गलत है। यदि घर में अच्छी तरह ख्याल नहीं रखा जा रहा है तो कोई भी बच्चा घर से भाग सकता है। हर बच्चे को इज्जत और प्यार भरी जिंदगी जीने का हक है। अगर कोई भी मां–बाप/परिवार/गांव उनके इस हक को छीनता है तो वह अपने बच्चे/बच्चों को गंवा सकता है।*
भाग गए बच्चे को आप कभी नहीं ढूंढ सकते।	*ऐसा नहीं है। अगर गुमशुदा बच्चों से संबंधित जानकारी दर्ज करने का इंतजाम हर गांव पंचायत में मौजूद हो और इस बारे में पुलिस को जानकारी दी जाए या चाइल्ड लाइन की मदद ली जाए तो बहुत सारे बच्चों को ढूंढा जा सकता है। ऐसे भागे हुए बच्चों के बीच बहुत सारी सरकारी और गैर–सरकारी संस्थाएं भी काम कर रही हैं। वे ऐसे बच्चों के बारे में आंकड़े रखती हैं और उन्हें अपने परिवारों के पास पहुंचाने के लिए बच्चे से मिली जानकारी के आधार पर स्थानीय पुलिस से संपर्क करती हैं।*
जो बच्चा एक बार भाग गया वह दोबारा भी भाग सकता है।	*अगर भागे हुए बच्चों को वापस लौटने पर भी अपने परिवार में सही माहौल नहीं मिलता है तो वे निश्चित रूप से दोबारा भाग सकते हैं। आमतौर पर यह देखा गया है कि अगर घर से भागने के बाद ज्यादा समय न बीता हो और बच्चे को ढूंढ कर उसके परिवार में पहुंचा दिया जाए तो ऐसे बच्चे प्रायः दोबारा नहीं भागते।*

कानून क्या कहता है?

बाल न्याय (देखभाल और सुरक्षा) कानून 2000

बाल न्याय (देखभाल और सुरक्षा) कानून, 2000 का ताल्लुक "किशोर" या "बच्चों" (ऐसा व्यक्ति जिसकी उम्र 18 साल से कम है) से है। ये ऐसे बच्चे होते हैं जिन्हें:

- देखभाल और सुरक्षा की जरूरत है, या
- जो गैर-कानूनी गतिविधियों में फंसे हुए हैं

देखभाल और सुरक्षा के जरूरतमंद बच्चे

इस कानून के धारा 2 (डी) के मुताबिक "देखभाल और सुरक्षा का जरूरतमंद" बच्चा वह होता है:

- जिसके पास रहने को घर या पेट भरने को साधन नहीं हैं
- जिसके मां-बाप या अभिभावक बच्चे की देखभाल करने की हालत में नहीं हैं
- जो यतीम है या जिसके मां-बाप ने उसे छोड़ दिया है या जो लापता है या घर से भाग आया और जिसके मां-बाप को जांच-पड़ताल के बाद भी ढूंढा नहीं जा सका
- जिसके साथ दुराचार, अत्याचार या शोषण हुआ है, जिससे गैरकानूनी काम करवाए गए हैं या जो इस तरह के खतरों के साए में है
- जो नशीली दवाओं या मानव व्यापार के खतरे में है
- जिसका उत्पीड़न किया जा रहा है या जिस पर उत्पीड़न का खतरा है
- जो किसी सशस्त्र संघर्ष, सामाजिक उथल-पुथल या प्राकृतिक आपदा का शिकार हुआ है।

बाल कल्याण समिति

- कानून के मुताबिक हरेक राज्य सरकार को हर जिले या जिलों के समूह के लिए एक या एक से अधिक बाल कल्याण समितियों का गठन करना चाहिए। ये समितियां संकटग्रस्त बच्चों की सुरक्षा, इलाज, विकास और पुनर्वास से संबंधित मामलों पर काम करती हैं। इसके अलावा वे बच्चों की बुनियादी जरूरतों का ध्यान रखती हैं और उनके मानवाधिकारों की रक्षा करती हैं।

समिति के सामने पेश होना

विशेष बाल पुलिस इकाई या डेजिगनेटेड पुलिस अधिकारी, सरकारी कर्मचारी, चाइल्ड लाइन, राज्य सरकार द्वारा मान्यताप्राप्त पंजीकृत स्वैच्छिक संगठन, कोई सामाजिक कार्यकर्ता अथवा राज्य सरकार द्वारा अधिकृत समाजसेवी नागरिक किसी भी ऐसे बच्चे को इस समिति के सामने पेश कर सकते हैं जिसे देख-रेख और सुरक्षा की जरूरत है। इसके अलावा संकटग्रस्त बच्चा खुद भी इस समिति से मदद मांग सकता है।

बाल कल्याण समिति बच्चे की स्थिति पर विचार करने के बाद उसे बाल गृह में भेजने का आदेश दे सकती है और किसी सामाजिक कार्यकर्ता या बाल कल्याण अधिकारी को उसके मामले में जल्दी से जल्दी जांच करने का हुक्म दे देती है।

यदि जांच पूरी हो जाने पर समिति को ऐसा लगता है कि बच्चे के पास कोई पारिवारिक या अन्य सहायता नहीं है तो समिति उसे बाल गृह या शेल्टर होम में रखे रहने का आदेश दे सकती है। जब तक बच्चे के पुनर्वास की

पूरी व्यवस्था नहीं होती या वह 18 साल का नहीं हो जाता तब तक उसे बाल गृह या शेल्टर होम में रखा जा सकता है।

गैरकानूनी गतिविधियों में फंसे बच्चे

"गैरकानूनी गतिविधियों में फंसे बच्चे" का मतलब ऐसे बच्चे से होता है जिस पर किसी गैरकानूनी काम या अपराध का आरोप होता है।

किशोर न्याय बोर्ड

राज्य सरकारों को हर जिले या जिलों के समूह में एक या एक से अधिक किशोर न्याय बोर्डों का गठन करना चाहिए। यह राज्य सरकारों की कानूनी जिम्मेदारी है। किशोर न्याय बोर्ड "गैरकानूनी गतिविधियों में फंसे बच्चों" से संबंधित मामलों पर काम करते हैं और पूरी स्थिति पर विचार करने के बाद बच्चे को जमानत देते हैं तथा मामले में फैसला सुनाते हैं।

पंचायत के सदस्य क्या कर सकते हैं

जब कोई बच्चा गांव से भाग जाता है तो–

- *सबसे पहली बात तो ये है कि इस तरह की घटना के बारे में जल्दी से जल्दी पुलिस को जानकारी जरूर दे देनी चाहिए। अगर पुलिस या विभिन्न स्थानों पर काम करने वाले गैर-सरकारी संगठनों के लोग ऐसे बच्चे को किसी मुश्किल या बेसहारा स्थिति में पाते हैं तो वे उससे मिली जानकारी के आधार पर आपके आसपास के थाने में जानकारी भेज सकते हैं।*
- *चाइल्ड लाइन पर जानकारी दें। चाइल्ड लाइन गुमशुदा या संकट में फंसे बच्चों के बारे में जानकारी रखने और मदद देने वाली एक संस्था है जिससे आप फोन पर संपर्क कर सकते हैं। इसके लिए आप देश भर में कहीं से भी 1098 पर फोन कर सकते हैं।*
- *कम से कम तीन-चार महीने तक टेलीविजन और अखबार पर लगातार नजर रखें। गुमशुदा बच्चों से संबंधित पन्नों को तो जरूर ही पढ़ें।*

जब किसी गुमशुदा बच्चे को पुलिस, एनजीओ या कोई अन्य व्यक्ति/संस्था उसके परिवार से मिला देती है या अगर ऐसा बच्चा खुद ही वापस लौट आता है तो–

- *गांव के प्रतिनिधि के नाते गांव में आपका अलग एक कद है। लिहाजा, आप बच्चे और उसके मां-बाप, दोनों से बात करें। समझने की कोशिश करें कि परिवार में बच्चा किस तरह की परेशानी महसूस करता है।*
- *परिवार को मदद दीजिए ताकि परिवार वाले भी अपने बच्चे की और अच्छी तरह देखभाल कर सकें। इसके लिए आप उन्हें आसपास मौजूद संस्थाओं और सेवाओं से जोड़ सकते हैं।*

- *घर पर सही माहौल बनाने में मदद दीजिए ताकि बच्चा दोबारा भागने की कोशिश न करे।*
- *जो संस्था बच्चे को लेकर वापस आई है उसे धन्यवाद दें।*

अपनी पंचायत के हर बच्चे को भागने से रोकने में आप क्या कर सकते हैं।

- *सबसे पहले तो पंचायत में गुमशुदा बच्चों की जानकारी इकट्ठा करने का इंतजाम होना चाहिए। जिस तरह पंचायतों या स्वास्थ्य केंद्रों में जन्म पंजीकरण या जनसंख्या का रिकार्ड रखा जाता है उसी तरह से गुमशुदा बच्चों का भी पूरा रिकार्ड रखना चाहिए।*
- *बच्चे इस बारे में जानकारी के सबसे भरोसेमंद साधन होते हैं। उन्हें इस तरह की जानकारियां इकट्ठा करने की जिम्मेदारी सौंपिए।*
- *अपने जिले की दूसरी पंचायतों को भी एकजुट करके राज्य सरकार पर दबाव डालिए कि वह आपके जिले में भी बाल कल्याण समिति और एक किशोर न्याय बोर्ड की स्थापना करे।*
- *चाइल्ड लाइन के बारे में ज्यादा से ज्यादा बच्चों को बताएं।*
- *घरेलू हिंसा, शराबखोरी, मारपीट, यौन शोषण, लिंग, जाति और विकलांगता पर आधारित ऐसा भेदभाव जिसके कारण बच्चे घर छोड़ कर भागने को मजबूर हो जाते हैं, उस पर नजर रखने के लिए मोहल्ला निगरानी समितियां या चौकसी समितियां बनाएं।*

बच्चों की बलि देना

देवताओं को खुश करने के लिए तरह-तरह के चढ़ावे चढ़ाए जाते हैं। कुछ लोगों को लगता है कि ईश्वर को खुश करने के लिए अगर किसी मनुष्य का जीवन उसके चरणों में अर्पित कर दिया जाए तो सारी मनोकामनाएं पूरी कर सकते हैं। इसे सबसे बड़ा बलिदान माना जाता है। लेकिन ऐसा करना अपराध है। आमतौर पर उम्मीद यह की जाती है कि पूजा करने वाला व्यक्ति देवी/देवता के चरणों में अपनी सबसे कीमती चीज अर्पित करे। क्योंकि बच्चा ही हमारा सबसे बेशकीमती नगीना होता है इसलिए कई बेवकूफ लोग अपने बच्चे की ही बलि चढ़ा देते हैं। कितनी हैरानी की बात है कि आज के आधुनिक युग में भी ऐसी असभ्य और बर्बर परंपरा जिंदा है।

बच्चे हमारे समाज के सबसे कमजोर सदस्य होते हैं। लिहाजा वे नर-बलि जैसी अमानवीय प्रथाओं के आसानी से शिकार हो जाते हैं। एक तरफ तो हम ये दावा करते हैं कि हम अपने बच्चों को सबसे ज्यादा सुरक्षा देते हैं और दूसरी तरफ हम उनकी कमजोरी का फायदा उठाने से भी नहीं चूकते हैं। कैसी विडंबना है!

तांत्रिक के हुक्म पर बच्चे की बलि

जिला मुजफ्फरनगर में रेखा नाम की एक महिला ने 15 जून 2005 को अपनी साढ़े चार साल की लड़की की बलि चढ़ा दी। पुलिस के मुताबिक रेखा किसी तांत्रिक से अपना इलाज करवा रही थी। तांत्रिक ने ही उसे इलाज के लिए अपनी बेटी की बलि चढ़ाने का हुक्म दिया था। पुलिस को सुरजो नाम की इस बच्ची का शव पश्चिमी उत्तर प्रदेश में खेड़की गांव के पास खेतों में मिला था। लड़की की 'उंगलियां कटी हुई थीं और बाल पूरी तरह जले हुए थे।'

पुलिस ने बताया कि रेखा नाम की यह महिला ओमपाल नाम के तांत्रिक से इलाज करवा रही थी। उसी ने रेखा को अपने 'शुद्धिकरण' के लिए बच्ची की बलि चढ़ाने का आदेश दिया था। बताया जाता है कि रेखा ने अपने दो भाइयों के साथ मिलकर पहले तो लड़की को अगवा किया और फिर उसे बेरहमी से मार डाला।

स्रोत : तांत्रिक के आदेश पर बच्चे की बलि – rediff.com – **पीटीआई न्यूज** – 15 **जून** 2005.

गलतफहमियां	हकीकत
बच्चों की बलि चढ़ाने से देवता खुश हो जाते हैं।	इस सोच को दुरुस्त कर लेना जरूरी है। आम विश्वास यह है कि देवताओं को संतुष्ट करने के लिए हमें अपनी सबसे कीमती चीज ही उनके चरणों में अर्पित करनी चाहिए। लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि हम दूसरे मनुष्यों को ही मारने लगें। कुछ लोग देवताओं को संतुष्ट करने के लिए औरों की जान लेने लगते हैं। देवी–देवता इस तरह की बर्बरता से भला कैसे खुश हो सकते हैं? हमारे सारे धर्म तो अहिंसा और सादगी भरे जीवन का पाठ पढ़ाते हैं। कोई भी धर्म हमें किसी और की जिंदगी लेने का हक नहीं देता। बलि का मतलब होता है दे देना। तो फिर बलि के नाम पर कोई किसी की जिंदगी ले कैसे सकता है?
बच्चों की बलि देने से व्यक्ति के पाप धुल जाते हैं।	यह कोरी बकवास है। किसी की जान लेने से बड़ा पाप और भला क्या हो सकता है। बलि देकर वह अपने पापों से मुक्त नहीं होता बल्कि एक और पाप का बोझ उसके सिर पर आ जाता है।
बच्चों की बलि चढ़ाकर सारे रोगों से मुक्ति मिल जाती है।	जी नहीं, बीमारी चाहे शारीरिक हो या दिमागी, यह जिंदगी का हिस्सा होती है। बीमारियों से छुटकारा पाने के लिए मुकम्मल इलाज करवाना चाहिए। किसी बच्चे की जिंदगी लेने से बीमारियां दूर नहीं हो सकतीं।

विकलांग बच्चे

विकलांग व्यक्ति के अधिकार

विकलांग व्यक्तियों के भी वही सारे मौलिक अधिकार होते हैं जो उनकी उम्र के दूसरे नागरिकों को मिलते हैं। इसका मतलब है कि उन्हें भी एक सम्मानजनक जीवन जीने का उतना ही अधिकार है जितना औरों को है।

विकलांग व्यक्तियों को इस तरह की सेवाओं का भी हक होता है जिनके सहारे वे ज्यादा से ज्यादा आत्मनिर्भर जीवन जी सकें।

उन्हें इस बात का अधिकार है कि आर्थिक और सामाजिक योजनाओं के हर चरण में उनकी खास जरूरतों को ध्यान में रखा जाए।

स्रोतः 1975 की महासभा, विकलांग व्यक्ति अधिकार घोषणापत्र

जिस्मानी या दिमागी तौर पर विकलांग व्यक्ति को अकसर हम हमदर्दी की नजर से देखते हैं। लेकिन हम इस बात को भूल जाते हैं कि विकलांग व्यक्ति के भी वही सारे अधिकार होते हैं जो हमें मिले हैं इसलिए उन्हें हमदर्दी की बजाय इस बात की जरूरत है कि हम उनकी स्थिति को समझें और उन्हें हर मुमकिन मदद दें।

बहुत सारे लोग विकलांगता को एक तरह के कलंक की तरह देखते हैं। अगर किसी परिवार में कोई व्यक्ति दिमागी तौर पर बीमार या कमजोर होता है तो मोहल्ले वाले उस परिवार से ही ताल्लुक कम कर लेते हैं। लोग ऐसे परिवार को नीची नजर से देखने लगते हैं।

अगर बच्चा विकलांग है तो उसे आर्थिक रूप से अनुपयोगी मान लिया जाता है। परिवार और समुदाय ऐसे बच्चे को एक अनचाहे बोझ की तरह देखते हैं। मां-बाप भी अपने विकलांग बच्चों को स्कूल नहीं भेजते। उन्हें भी सही लगता है कि ऐसा बच्चा भला पढ़-लिख कर भी क्या कर लेगा! उन्हें विकलांग बच्चे की पढ़ाई-लिखाई बोझ दिखाई देती है। दुख की बात है कि विकलांग बच्चों में से बहुत थोड़े बच्चे ही स्कूलों में दाखिला ले पाते हैं।

विकलांग बच्चों की खास तरह की जरूरतें होती हैं। हमें इन जरूरतों को पूरा करना चाहिए। अगर मौका मिले तो वे भी ऐसे हुनर सीख सकते हैं जिनसे वे उनकी रोजी-रोटी चल सकती है। विकलांगता एक मुसीबत या त्रासदी तभी बनती है जब हम विकलांग व्यक्ति को वे चीजें नहीं दे पाते जिनके सहारे वह जिंदगी में आगे बढ़ सकता था।

गलतफहमियां	हकीकत
विकलांग बच्चे के लिए पढ़ाई-लिखाई का कोई मतलब नहीं।	जी नहीं, पढ़ाई-लिखाई तो हर बच्चे के लिए जरूरी है। चाहे बच्चा विकलांग हो या ना हो, उसके पूरे विकास में शिक्षा कुछ न कुछ फायदा जरूर पहुंचाती है।
विकलांग बच्चे का कोई महत्व नहीं होता। इस तरह के बच्चे तो घर वालों के ऊपर बस एक बोझ होते हैं। वे कमा कर नहीं ला सकते।	अगर सही प्रशिक्षण और मदद दी जाए तो विकलांग बच्चे को भी कई ऐसे काम-धंधे सिखाए जा सकते हैं जिनके सहारे वह कमा कर ला सकता है और इज्जत की जिंदगी जी सकता है।
विकलांग बच्चा ऐसे मां-बाप के घर में ही पैदा होता है जिन्होंने पिछले जन्म में पाप किया था।	अतीत या पिछले जन्म से विकलांगता का क्या मतलब! ये तो गर्भावस्था के समय हुई किसी लापरवाही या कमी का नतीजा होती है। कुछ बच्चे आनुवांशिक विकृतियों के कारण भी विकलांग हो जाते हैं।

कानून क्या कहता है?

जो कानून बाकी बच्चों पर लागू होते हैं वही विकलांग बच्चों पर भी लागू होते हैं। इसके अलावा कुछ ऐसे खास कानून भी हैं जो विकलांग बच्चों की जरूरतों को ध्यान में रख कर ही बनाए गए हैं। ये कानून इस प्रकार हैं:

- विकलांग व्यक्ति (समान अवसर, अधिकारों की रक्षा एवं पूरी हिस्सेदारी) कानून, 1995

इस कानून में विकलांग व्यक्तियों को भी बराबर मौके देने का इंतजाम किया गया है। ये कानून इस बात की व्यवस्था करता है कि सभी चीजों में विकलांग व्यक्तियों की पूरी हिस्सेदारी हो और उन्हें शिक्षा, रोजगार व प्रशिक्षण, नौकरियों में आरक्षण, शोध एवं मानव संसाधन विकास, स्वच्छंद माहौल, पुनर्वास, बेरोजगारी भत्ता, विशेष बीमा योजना व गंभीर विकलांगता वाले व्यक्तियों के लिए आश्रय गृहों की स्थापना जैसे सारे अधिकार मिलें।

- मानसिक स्वास्थ्य कानून, 1987

यह कानून इसलिए बनाया गया है ताकि मानसिक रोग और मानसिक रोगी को कलंक की नजर से न देखा जाए। इस कानून में कहा गया है कि मानसिक रोगियों का भी अन्य रोगियों की तरह सामान्य रूप से इलाज किया जाना चाहिए और उनके आसपास भी ज्यादा से ज्यादा सामान्य माहौल होना चाहिए।

***राष्ट्रीय ऑटिज़्म, सेरेब्रल पालसी, मानसिक अल्पविकास एवं एकाधिक विकलांगता कल्याण ट्रस्ट कानून,** 1999

इस कानून के जरिए राष्ट्रीय स्तर पर ऐसे लोगों की देखरेख और कल्याण के लिए एक संस्था बनाने का प्रावधान किया गया है जो ऑटिज्म, सेरेब्रल पालसी, मानसिक अल्पविकास और एक से अधिक अपंगताओं के शिकार हैं। इस कानून का मकसद मानसिक अल्पविकास और सेरेब्रल पालसी के रोगियों की देखभाल करना है।

इन कानूनों के अलावा भी विकलांग बच्चों को ध्यान में रखकर बनाए गए कार्यक्रमों और योजनाओं में कई विशेष प्रावधान और व्यवस्थाएं की गई हैं। उदाहरण के लिए:

- सन् 1974 में विकलांग बालक एकीकृत शिक्षा योजना शुरू की गई ताकि विकलांग बच्चों को सामान्य स्कूलों में दाखिला दिया जा सके।
- साल 1985 में जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम शुरू हुआ जिसमें इस बात पर जोर दिया गया है कि शिक्षा का सार्विकीकरण तभी किया जा सकता है जब विकलांग बच्चों को भी शिक्षा के पूरे मौके दिए जाएं।
- राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 मामूली विकलांगता वाले बच्चों को मुख्यधारा के शिक्षा संस्थानों से जोड़ने पर बल देती है।
- 1987 में एकीकृत विकलांग शिक्षा परियोजना शुरू की गई। यह परियोजना आसपास के सभी स्कूलों को इस बात के लिए प्रोत्साहित करती है कि वे विकलांग बच्चों को दाखिला दें।
- राष्ट्रीय ऑटिज़्म, सेरेब्रल पालसी, मानसिक अल्पविकास एवं एकाधिक विकलांगता कल्याण ट्रस्ट कानून, 1999 में समावेशी शिक्षा पर जोर दिया गया है।
- सर्वशिक्षा अभियान (एसएसए 2000) में कहा गया है कि "किसी भी तरह और किसी भी स्तर की विकलांगता से ग्रस्त विशेष आवश्यकताओं वाले प्रत्येक बच्चे को सही वातावरण में पूरी शिक्षा मिलनी चाहिए।"

सिर्फ कानूनी कवायद

जब विन्सी डि'सिल्वा को पता चला कि उनके बेटे को डिस्लेक्सिया है तो उन्हें यकीन नहीं हुआ। उनका बेटा पढ़ाई-लिखाई में बार-बार पिछड़ रहा था। स्थिति से निपटने के लिए उन्होंने अपने बेटे को घर पर खूब पढ़ाया। उन्हें उम्मीद थी कि शायद अगला रिजल्ट अच्छी खबर लाए। उनका बेटा इंडियन स्कूल सर्टिफिकेट एग्जामिनेशन (आईसीएसई) बोर्ड से जुड़े मुंबई के एक स्कूल में पढ़ रहा था। आईसीएसई के नियमों में साफ-साफ कहा गया है कि विकलांग बच्चों को इम्तहान में अनुग्रहांक (ग्रेस अंक) दिए जाएंगे और पर्चा पूरा करने के लिए उन्हें ज्यादा समय दिया जाएगा। लेकिन स्कूल के अधिकारी ये 'रियायतें' देने के लिए तैयार नहीं थे। विन्सी के बेटे को छठी कक्षा में फेल कर दिया गया। अगर उसे हक के हिसाब से अनुग्रहांक मिल जाते तो वह आराम से पास हो जाता। विन्सी यह शिकायत लेकर प्रिंसिपल और स्कूल के ऊँचे अधिकारियों से भी मिलीं लेकिन कोई नतीजा नहीं निकला। मजबूरन उन्हें मुंबई उच्च न्यायालय में मुकदमा दायर करना पड़ा। अदालत में यह मुकदमा अभी जारी है। इस बीच उनका बेटा छठी कक्षा में दोबारा इम्तहान दे रहा है।

विन्सी डि'सिल्वा की कहानी कोई अनोखी नहीं है। जिस देश की शिक्षा व्यवस्था विविधता को अपनाना तो दूर की बात रही, स्वीकार करने को भी तैयार नहीं है वहां इस बात पर हैरानी कैसी कि विकलांग बच्चों को हर कदम पर धक्का देकर बाहर निकाल दिया जाता है। देश की शिक्षा नीति में समावेश शब्द भले ही कितना अहम दिखाई देता हो लेकिन विन्सी के अनुभवों से पता चलता है कि कानून बनाने और उसको लागू करने के बीच जो फासला है उसे आसानी से पाटा नहीं जा सकता।

स्रोत : इनक्लूडेड बाई लॉ, बट लिटिल ऐल्स, http://www.indiatogether.org/2006/jan/edu-speced.htm

पंचायत प्रतिनिधि क्या कर सकते हैं?

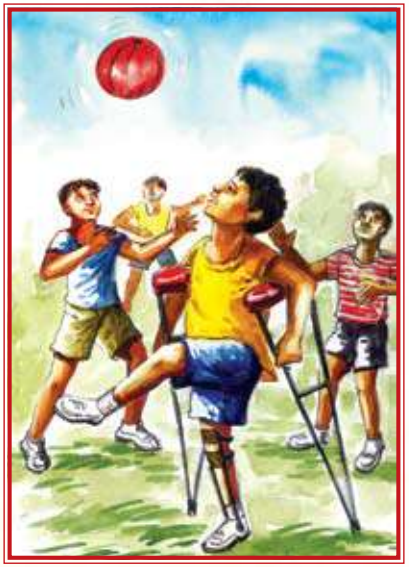

- *सबसे पहले तो हम सबको जिस्मानी और दिमागी, दोनों तरह की विकलांगता के बारे में और ज्यादा समझना चाहिए। केवल तभी हम औरों की मदद कर सकते हैं क्योंकि अलग-अलग तरह की विकलांगता से निपटने के लिए खास और अलग तरह के प्रयास जरूरी हो जाते हैं।*
- *विकलांग बच्चों को सेवाएं मुहैया कराने वाली संस्थाओं से हमें सदा संपर्क रखना चाहिए। अगर हमारे आसपास कोई विकलांग बच्चा है तो उसे और उसके परिवार को ऐसी संस्था से मिलवाना चाहिए।*
- *विकलांगता से जुड़े बदनामी के अहसास को दूर करने के लिए समुदाय में जागरूकता पैदा करना बहुत जरूरी है। गांव का नेता होने के नाते पंचायत के सदस्य लोगों को ये समझाने में बहुत बड़ा योगदान दे सकते हैं कि विकलांग बच्चा किन चुनौतियों का सामना कर रहा है और उसे किस तरह मदद दी जा सकती है ताकि वह रुकावटों से आगे जा सके और उसका विकास सही ढंग से होता रहे।*
- *मां-बाप, परिवार और देखभाल करने वालों को विकलांग बच्चों की जरूरतों से परिचित करवाएं। बैठकों में और अलग से मिलकर विकलांग बच्चों के मां-बाप से चर्चा करें। छोटे-छोटे विकलांग बच्चों के मां-बाप को स्कूल तथा उसकी गतिविधियों की योजना बनाने में शामिल करें।*
- *आंगनवाड़ी कामगारों और शिक्षकों को विकलांग बच्चों की खास जरूरतों के बारे में संवेदनशील बनाएं और उनके अधिकारों के बारे में जागरूकता पैदा करें।*
- *स्कूल तथा अन्य संस्थानों पर नजर रखें। इस बात पर ध्यान दें कि वहां विकलांग बच्चों के साथ किसी तरह का भेदभाव न हो और उनकी खास जरूरतों को नजरअंदाज न किया जाए।*

संदर्भ

वर्ल्ड रिपोर्ट ऑन वायलेंस ऐण्ड हैल्थ, सारांश। http://www.who.int/violence_injury_prevention/violence/worldreport/en/abstract % 20 final pdf पर उपलब्ध। **सेक्सुअल एब्यूज ऑफ स्ट्रीट चिल्ड्रन ब्राट टू ऐन ऑब्जर्वेशन होम** में 22 नवंबर 2003 को देखा।

दीप्ति पगारे, जी एस मीणा, आर सी जिलोहा एवं एम एम सिंह, इंडियन पीडियाट्रिक्स, खंड 42, 17 फरवरी 2005

आशा कृष्णकुमार, **सायलेंट विक्टिम्स,** फ्रंटलाइन, खंड 20, अंक 21, 11-24 अक्तूबर 2003

वर्ल्ड रिपोर्ट ऑन वायलेंस ऐण्ड हैल्थ, सारांश। http://www.who.int/violence_injury_prevention/violence/worldreport/en/abstract % 20 final pdf पर उपलब्ध। **सेक्सुअल एब्यूज ऑफ स्ट्रीट चिल्ड्रन ब्राट टू ऐन ऑब्जर्वेशन होम** में 22 नवंबर 2003 को देखा। दीप्ति पगारे, जी एस मीणा, आर सी जिलोहा एवं एम एम सिंह, इंडियन पीडियाट्रिक्स, खंड 42, 17 फरवरी 2005

डिसेबल्ड विलेज चिल्ड्रन (हिस्पेरियन फाउंडेशन) तथा नथिंग एबाउट अस विदाउट अस (हैल्थ राइट् स), दोनों डेविड बर्नर द्वारा लिखित।

ट्रेनिंग इन दि कम्युनिटी फॉर पीपुल विद डिसेबिलिटीज, डब्ल्यूएचओ द्वारा प्रकाशित।

लेट् स कम्युनिकेट, संचार संबंधी कठिनाइयों से जूझते बच्चों के बीच काम करने वालों के लिए पुस्तिका, डब्लयूएचओ, यूनिसेफ तथा जिम्बाब्वे स्वास्थ्य मंत्रालय द्वारा प्रकाशित।

इनक्लूडेड बाई लॉ, बट लिटिल एल्स

http://www.indiatogether.org/ 2006/jan/edu-speced.htm
http://www.chennaionline.com/society/06june12th.asp
http://www.indianngos.com/issues/child/abuse
http://www.rahifoundation.org/incestchild

भारत सरकार
महिला एवं बाल विकास मंत्रालय
ए-विंग, शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110001, भारत
2006

प्रस्तुति : हक् सेंटर फॉर चाइल्ड राइट्स
208, शाहपुर जाट
नई दिल्ली – 110049
टेलीफोन : 011-26490136